चन्दामामा
जून १९८२

Calling all Whiz Kids!
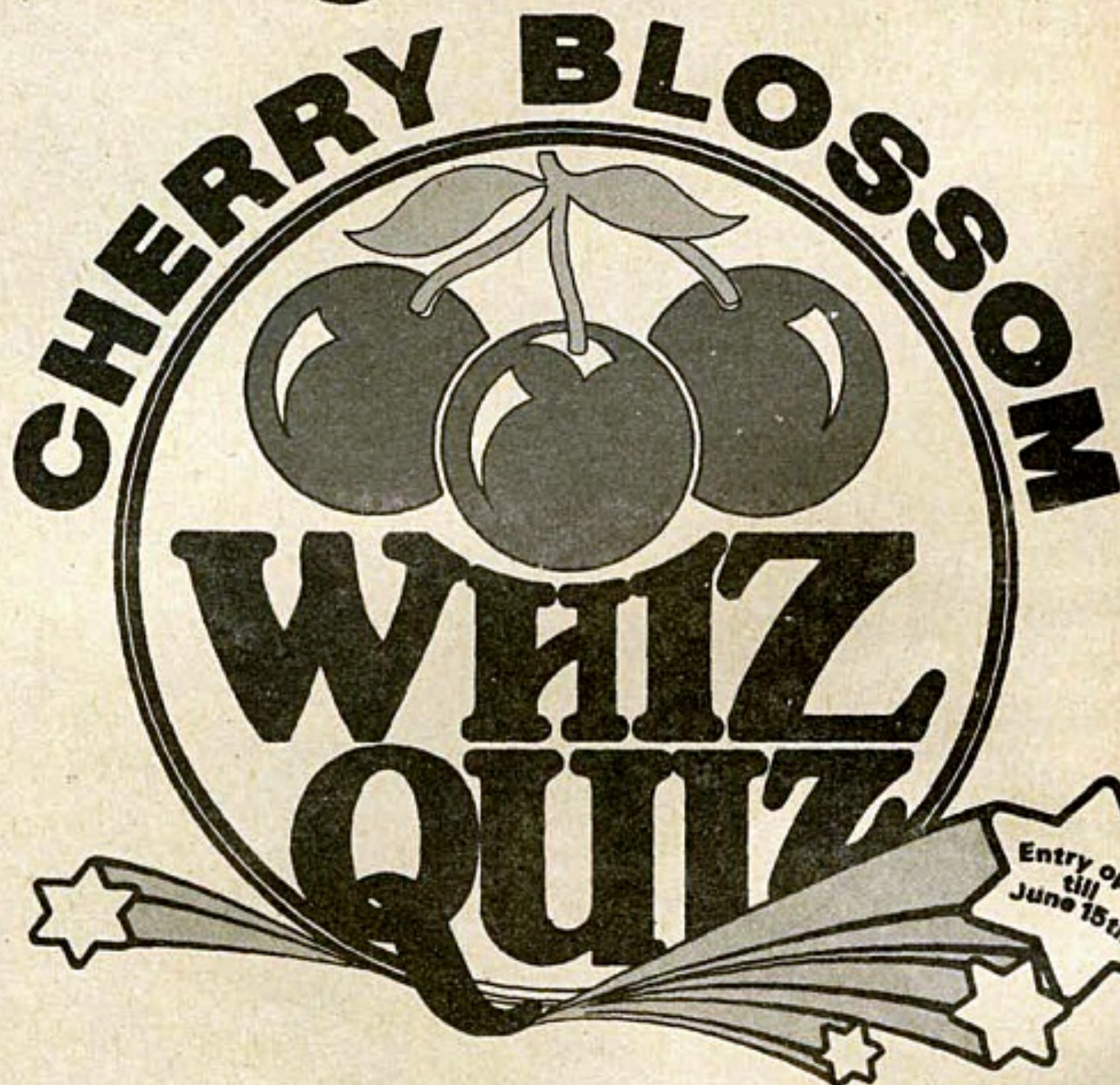
It's easy! It's fun!!
There are over 100 fabulous prizes to be won!!!

All you have to do is tick off the right answers to the five questions given, tell us why you Cherry Blossom your shoes every day, and mail the entry form to us, duly completed and accompanied by the inner foil of one 40gm Cherry Blossom tin or the foils from two 15gm Cherry Blossom tins. And you could win one of many fabulous prizes!

Sound Prizes From H.M.V.

✱ HMV Stereocorder

✱ HMV Stereo 1515

✱ HMV Stereo 1010

✱ HMV Orbit 404

First, second and third prizes may be exchanged for other HMV products of equivalent cost.

Every Entrant Wins!

A fabulous discount coupon on HMV players (Fiesta, Popstar and Swinger) for all entries received before 30th May, 1982.

RULES

1. The contest is open to school children only (up to Class XII). This will be verified for all award winners. Contestants should be residents of the Indian Union. 2. You may send in as many entries as you wish but each entry must be accompanied by 1 inner aluminium foil from a 40gm Cherry Blossom tin or 2 foils from 15gm tins of Cherry Blossom. 3. Entries should be addressed to the Advertiser, Cherry Blossom Whiz Quiz, P.O. Box No. 9192, Park Street, Calcutta 700 016. Registered mail will not be accepted. 4. Last date of receipt of entries is 15-6-1982. Illegible, incomplete and late entries will be disqualified. 5. The decision of the judges will be final and binding. No correspondence will be entertained. In the event of a tie, the value of the prizes will be equally divided among the winners. 6. Children of the employees of Reckitt & Colman of India Ltd. and Lintas . India are not eligible to join the contest.

ENTRY FORM

1. Who sang the song "Mera Joota hai Japani"?
   ☐ Lata ☐ Mukesh ☐ Kishore
2. Behind a rider's shoe is a piece of metal which is used for prodding the horse. What is it called?
   ☐ Spear ☐ Spur ☐ Goad
3. A fairy tale character lost her glass slipper. Who was she?
   ☐ Snow White ☐ Cinderella ☐ Red Riding Hood
4. What is the first name of the Indian Film heroine whose last name is also a style of footwear?
   ☐ Rekha ☐ Padmini ☐ Poonam
5. Listed below are 9 qualities of Cherry Blossom. Select the 7 you feel are most important and rank them from 1 to 7 in what you feel is their order of importance by putting the rank in the box provided.
   ☐ Has an International formula ☐ Contains imported waxes
   ☐ Nourishes leather ☐ Gives a mirror shine
   ☐ Gives a longer lasting shine ☐ Makes shoes last longer
   ☐ Is economical ☐ Keeps leather soft.
   ☐ Is easy to use

Please complete the following sentence in not more than 10 words (English or Hindi)

I Cherry Blossom my shoes every day because

मैं अपने जूते रोज़ चेरी ब्लॉसम से चमकाता हूँ क्योंकि

____

____

Name: ______________________________

Address: ______________________________

____

Entries should reach us at the following address on or before 15.6.82: The Advertiser, Cherry Blossom Whiz Quiz, P.O. Box No: 9192, Park Street, Calcutta — 700 016.

Did you Cherry Blossom your shoes today ?

LINTAS/CI/CB/25/1

सात समंदर पार मेरी नाव चली
लाल परी के गांव मेरी नाव चली
भर भर लाऊं जॅम्स नाव में अपनी झटपट
लेना हो जो जॅम्स किनारे से हटना मत
Cadbury's
GEMS
कितना सुन्दर सपना...झट ले लो जॅम अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे; मीठे मीठे सपनों जैसे!
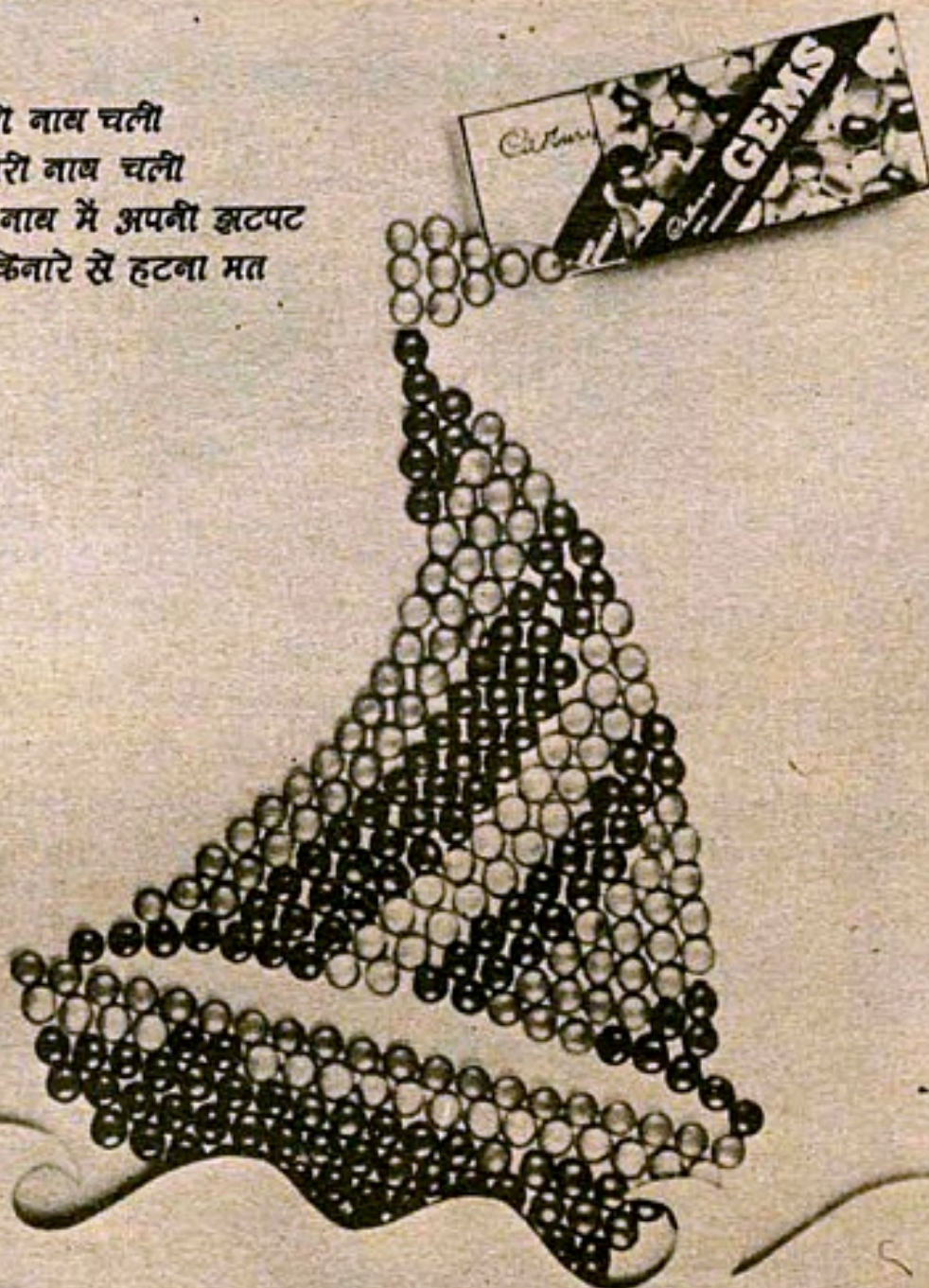
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा का मूल "वसुंधरा" की रचना है। विपदाओं में फँसे हुए लोगों की निस्वार्थ भाव से मदद करना उत्तम धर्म कहलाता है। ऐसे धर्मबुद्धि वाले दो युवकों का चित्रण "प्राणदाता" नामक कहानी में हुआ है।

अमर वाणी

नीचाश्रयो न कर्तव्यः, कर्तव्यो महदाश्रयः।
ईशाश्रयी महानागः, पप्रच्छ गरुडं सुखम्॥

[क्षुद्र व्यक्तियों के आश्रय में जाने के बदले शक्तिशाली लोगों के आश्रय में जाना कहीं उत्तम है। शिवजी के आश्रय में जानेवाला सर्प गरुड जैसे शक्तिशाली पक्षी से उसके कुशल-क्षेम पूछकर उसका अपमान कर पाया है।]

वर्ष : ३४ जून १९८२ अंक : १०

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

दगाखोर

विशाख नामक एक व्यापारी के यहाँ सोलह साल का महेन्द्र नामक एक युवक कर्मचारी था। काम पर लगने के चन्द दिनों के अन्दर ही उसने अपने मालिक की प्रशंसा प्राप्त की। उसकी नज़र में महेन्द्र बड़ा ही विश्वासपात्र था। इस कारण व्यापार संबंधी कार्य–ख़ास कर कर्ज वसूलने की जिम्मेदारी-उसके हाथ सौंप दी और व्यापारी निश्चित रहने लगा।

पड़ोसी गाँव के व्यापारी गोपीनाथ से विशाख को बड़ी रक़म मिलनी थी। वह रक़म वसूल करने का काम विशाख ने महेन्द्र को सौंप दिया। सुबह निकलने पर शाम तक उस गाँव से लौट कर आया जा सकता था।

महेन्द्र सूर्योदय के होते ही घर से चल पड़ा और दुपहर तक उस गाँव में पहुँचा। व्यापारी से विशाख को जो पाँच हज़ार रुपये प्राप्त होने थे, सारे रुपये महेन्द्र के हाथ सौंप दिये। वे रुपये सुरक्षित रूप से पोटली बांधकर महेन्द्र अपने गाँव के लिए चल पड़ा।

उन दो गाँवों के बीच एक नदी पड़ती थी। बरसात के मौसम को छोड़ बाकी दिनों में वह नदी सूखी पड़ी रहती थी। लेकिन कभी-कभी दूर के पहाड़ों पर पानी बरसता, तो वहाँ का पानी बाढ़ जैसे नदी में बहता था।

घुटनों तक गहरे पानी में महेन्द्र नदी पार कर रहा था, नदी को पार करके वह किनारे पर पहुँचा ही था, तभी उसे पहाड़ों की ओर से भयंकर गर्जन सुनाई दिया। चकित हो महेन्द्र ने अपनी दृष्टि उस ओर दौड़ाई, तभी उमड़ते हुए बाढ़ का पानी नदी में आ गया। महेन्द्र झट से किनारे पहुँच कर दूर जा खड़ा हुआ।

रामगोहन गुप्ता

कुछ ही मिनटों में वह सारा प्रदेश जलमय हो गया। बाढ़ में पेड़ो की कटी हुई डालें बहती जा रही थीं, उनसे थोड़ी दूर पर दो आदमी उस प्रवाह में डूबते-उतरते बहते जा रहे थे। उस दृश्य को देख महेन्द्र का दिल पिघल गया।

इसके बाद गाँव के समीप पहुँचते वक़्त महेन्द्र के मन में दुर्बुद्धि पैदा हो गई। वह यह कि अब उसके हाथ में उस वक़्त पाँच हज़ार रूपये हैं। वह झूठ बोलकर आसानी से उस धन को अपना बना सकता है।

इस विचार के आते ही महेन्द्र ने निकट के एक तालाब में डुबुकी लगाई और भीगे कपड़ों के साथ वह सीधे दूकान में पहुँचा। उसे देख विशाख ने घबरा कर पूछा– "महेन्द्र, क्या हुआ? ये भीगे कपड़े कैसे?"

महेन्द्र ने रोनी सूरत बनाकर कहा– "मालिक, मैं रास्ते में एक नदी पार कर रहा था, अचानक नदी में बाढ़ आ गई। मैं उस बाढ़ में थोड़ी दूर बह गया। आखिर बड़ी मुश्किल से तैरकर किनारे पहुँचा।"

"तुम एक बहुत बड़े खतरे से बच गये हो! भाग्यवान हो।" विशाख ने खुशी प्रकट की।

"मगर मालिक..." इन शब्दों के साथ महेन्द्र ने रोना शुरू किया।

विशाख की समझ में न आया कि आखिर बात क्या है? उसने विस्मय के साथ महेन्द्र की ओर देखा।

"मालिक, बहुत बड़ा नुक़सान हो गया है। जान बचाने की कोशिश में रुपयों की थैली बाढ़ में बह गई है!" महेन्द्र ने कहा।

विशाख चकित रह गया। पाँच हज़ार रुपये तो भारी रक़म है! फिर भी जान बचाने की कोशिश में धन की बात लोग भूल जाते हैं। इस विचार के आते ही बोला–"अच्छी बात है, जो हुआ, सो हो गया। घर जाकर सूखे कपड़े पहन कर आ जाओ; फ़िक्र मत करो।"

विशाख के मुँह से ये बातें सुनकर गोपाल विस्मय में आ गया। क्योंकि गोपाल के हाथ पाँच हज़ार रुपये सौंपने के बाद उसे कोई जरूरी काम आ पड़ा और वह उसके पीछे थोड़ी देर बाद नदी के उस पार में स्थित गजपति नगर के लिए निकल पड़ा। वह नदी पार करना ही चाहता था कि इस बीच नदी में अचानक भयंकर बाढ़ आ गई।

इसके पहले ही महेन्द्र नदी को पार कर दूसरे किनारे पर खड़ा था। इसे देख गोपाल बड़ा खुश हुआ था।

दर असल बात यों हुई थी। मगर महेन्द्र ने अपने मालिक को कोई मन गढंत कहानी सुनाकर पाँच हज़ार रुपये हड़प लिया है। इस पर गोपाल ने सोचा कि विशाख का अपने नौकर महेन्द्र पर जो विश्वास है, उसे कथनी के द्वारा नहीं, बल्कि करनी के द्वारा साबित कर दूर करना है।

इस वास्ते गोपाल ने एक योजना बनाई, और विशाख को समझाया–"आप तो बड़े ही भद्र पुरुष हैं, वरना कोई दूसरा होता तो यही सोचता कि मैंने महेन्द्र के हाथ में सौ–दो सौ रुपये देकर सारे रुपये बाढ़ में बह जाने की खबर गोपाल के मुँह से कहलवाई है।"

मालिक का यह आश्वासन पाकर महेन्द्र खुशी-खुशी घर चला गया। इस घटना के चार-पाँच दिन बाद कर्ज चुकाने वाले पड़ोसी गाँव के व्यापारी गोपाल विशाख की दूकान में पहुँचा, और पूछा–"विशाखजी, आपको रुपये मिल गये हैं न?"

उस वक्त महेन्द्र दूकान में नहीं था। विशाख ने महेन्द्र के मुँह से जो बातें सुनी थीं, सारी बातें सुनाकर बोला–"गोपाल, मेरे मन में पल भर के लिए जरूर उस पर संदेह पैदा हुआ लेकिन नदी में अचानक बाढ़ आने की बात अगर दूसरों के मुँह से मैंने नहीं सुनी होती तो मैं उसकी खबर लेता।"

इस पर विशाख ने मुस्कुरा कर कहा– "मेरे नौकर के प्रति मेरे मन में जो गहरा विश्वास है, वही विश्वास मेरे साथी व्यापारी आप के प्रति भी है।"

"ओह, ऐसी बात है। तब तो मैं यह साबित करना चाहता हूँ कि मैं आपके नौकर महेन्द्र से भी ज़्यादा ईमानदार और विश्वास पात्र हूँ। आज रात को नौ बजे के क़रीब आप अपना वेष बदल कर शिवाले के पास बेल वृक्ष के नीचे अंधेरे में खड़े हो जाइये। मैं उसके बाजू में झाड़ियों के पीछे छुपा रहूँगा। तब देखिये, क्या होता है!" गोपाल ने सुझाया।

विशाख ने आश्चर्य में आकर पूछा– "यह सब पहेली कैसी? जो कुछ कहना चाहते हैं, साफ़-साफ़ क्यों नहीं बता देते?"

"सिर्फ़ बता देने से बात आप की समझ में न आएगी। इसीलिए मैंने आप को शिवाले के पास बुलाया है।" यों समझा कर वहाँ से चला गया।

उस दिन शाम के वक़्त गोपाल महेन्द्र के घर पहुँचा और महेन्द्र का नाम लेकर पुकारा। महेन्द्र ने किवाड़ खोला और सामने गोपाल को देख चौंक पड़ा।

गोपाल धीमी आवाज़ में बोला– "बेचारे उस दिन मैंने जो रुपये दिये, वे नदी की बाढ़ में बह गये हैं न?"
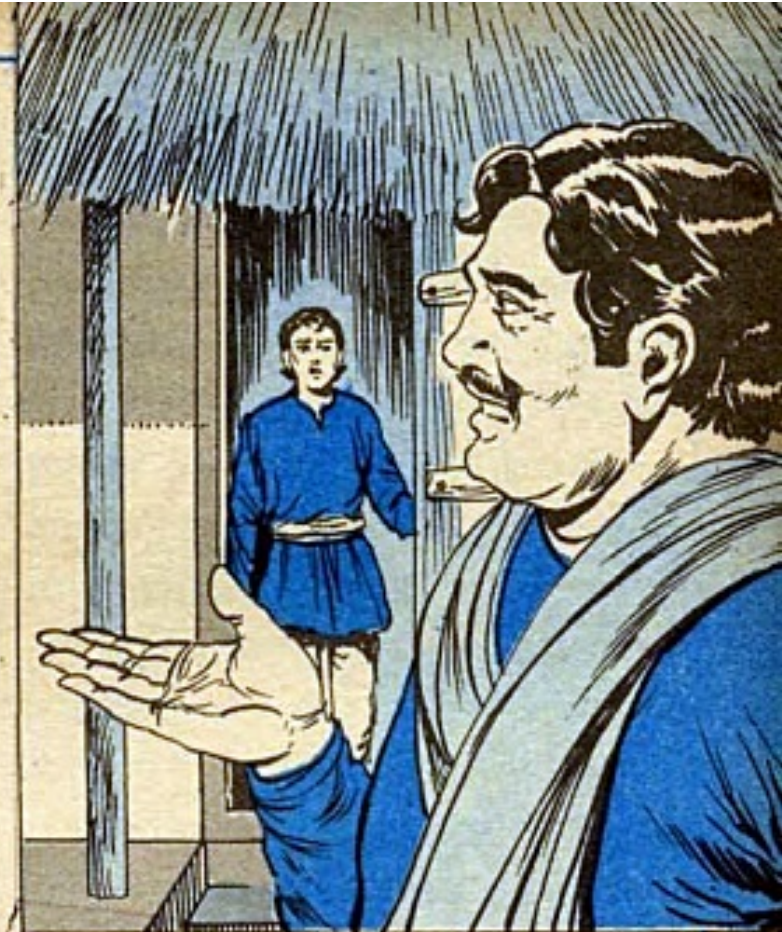
ये शब्द सुनने पर महेन्द्र के चेहरे पर की भय की रेखाएँ गायब हो गईं। उसने कहा–"हाँ, हाँ जी! मालिक के रुपये सौ-दो सौ तो नहीं, पूरे पाँच हज़ार थे। मैं थोड़ा-बहुत तैरना जानता था, बाढ़ में तैरकर जान बचाकर किनारे लगा।"

इस पर गोपाल परिहास पूर्वक हँसकर बोला–"अरे भाई, मेरे सामने तुम्हारा यह कपट नाटक नहीं चलने का है। तुम्हारे मन की बात ताड़ने के लिए मैंने ये बातें कहीं। मैंने खुद अपनी आँखों से देखा है। नदी में बाढ़ आने के पहले ही तुम उस किनारे पर पहुँच गये थे। चाहे तो मैं दो और आदमियों से गवाह दिला सकता हूँ।"

फिर क्या था, अपनी चोरी के प्रकट होते देख महेन्द्र आपादमस्तक कांप उठा। गोपाल ने उसके कंधे पर हाथ रखकर समझाया—"सुनो, मैं यह खबर तुम्हारे मालिक को नहीं दूंगा। मगर मुझे पाँच हज़ारों में से आधा रक़म देनी होगी! क्या तुम्हें मंजूर है?"

महेन्द्र ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया और रुपये लाने के लिए जाने को हुआ, तब गोपाल ने उसे रोककर समझाया—"मुझे अभी अपने एक दोस्त से मिलने जाना है। अपने साथ रुपयों की थैली ले जाना अच्छा न होगा। आज रात को नौ बजे के क़रीब मैं शिवाले के पास बेल वृक्ष के नीचे खड़ा रहूँगा। तुम रुपये वहीं पर लेते आओ।"

महेन्द्र रात को नौ बजे के क़रीब रुपये लेकर शिवाले के पास पहुँचा। वहाँ पर बेल वृक्ष के नीचे गोपाल के कहे मुताबिक़ एक आदमी को खड़ा हुआ पाया। महेन्द्र उसके समीप जाकर बोला—"गोपाल जी, अपने वचन के मुताबिक़ में ढाई हज़ार ले आया हूँ। अब आपको भी अपने वचन का पालन करना होगा। आप कृपया यह बात मेरे मालिक को न बताइयेगा।"

ये बातें सुनने पर बिशाख को लगा कि उसका दिमाग चकरा रहा है। वह अपने क्रोध को रोक न पाया। उसने महेन्द्र के गाल पर खींच कर दो-चार चपत जमा दिये और कहा—"अरे बदमाश! मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि तुम मेरे साथ ऐमा दगा दोगे। मैं इसी वक़्त तुम्हें सिपाहियों के हाथ सौंप सकता हूँ। लेकिन तुमने बहुत समय तक ईमानदारी के साथ मेरी सेवा की है। इसलिए मैं तुम्हें माफ़ कर देता हूँ। आइंदा तुम दूकान साफ़ करना, माल ढोकर लाना वगैरह साधारण काम किया करो।"

उसी वक़्त गोपाल वहाँ पहुँचा। नीचे गिरी रुपयों की थैली बिशाख के हाथ देकर महेन्द्र से बोला—"बाक़ी ढाई हज़ार भी तुम अपने मालिक को दो। मैंने नहीं सोचा था कि तुम्हें ऐसी हल्की सजा मिलेगी। तुम्हारे मालिक की उदारता पर मैं मुग्ध हूँ।'

[७]

[राजा के द्वारा गद्दी त्यागने के लिए जनता ने जो आंदोलन चलाया, उससे चित्रसेन व्याकुल हुए। उन्होंने अचानक राजमहल के ऊपर से नीचे कूदकर प्राण त्याग दिये। जनता ने उत्साह में आकर समरसेन के जयकार किये। समरसेन नरवाहन को साथ ले सेना के साथ दुश्मन पर हमला करने चल पड़ा। बाद...]

शिवदत्त मंदर देव से यों बोला—"दो-तीन सौ पैदल सेना के आगे अर्द्ध चंद्राकृति में कुछ घुडसवार निकलने लगे। दुश्मन के सैनिक अचानक पैदल सेना पर हमला करके उसके भीतर भगदड मचाना चाहे तो पहले उन्हें समरसेन के घुड़सवारों का सामना करना होगा न?"

'हां, हां, तुम्हारा कहना वाजिब है। समरसेन ने एक अभेद्य युद्ध व्यूह की रचना की है। उसे भेदना दुश्मन के लिए आसान काम नहीं है।' मंदर देव मंदहास करते बोला।

समरसेन के इस नये युद्ध तंत्र ने दुश्मन की चाल को छिन्न-भिन्न कर दिया। धीरे-धीरे आगे बढ़ने वाले समरसेन के सैनिक दल ने दुश्मन के दिल में घबराहट पैदा कर दी होगी। इसीलिए वे लोग अहिस्ते-अहिस्ते पीछे की ओर हटने लगे।

अचानक समर सेन के सैनिक-दल में से शंखनाद और जयकार गूंज उठे। तेज़ी के साथ आक्रमण करनेवाले समरसेन के घुड़सवारों का दुश्मन के आश्वारोहियों ने हिम्मत के साथ सामना किया। भाले-बरछे धारण किये आश्वारोहियों का भीषण युद्ध वर्णन के बाहर था। समरसेन के सैनिकों ने प्राणों की परवाह किये बिना शत्रु के साथ लड़ना शुरू किया।

चार-पांच मिनट के अन्दर ही दुश्मन के सैनिक तितर-बितर हो चारों तरफ़ भागने लगे। अब मौक़ा पाकर पैदल सेना दुश्मन की सेना पर हमला कर बैठी। विजय की खुशी में समरसेन के घुड़सवारों ने शत्रु-सैनिकों पर अपने हथियारों का प्रहार करना शुरू किया। भागने केलिए कोई रास्ता न पाकर दुश्मन के सैनिक जान पर खेल कर लड़ने लगे।

मैं यह सोचकर मन ही मन बड़ा खुश हुआ कि विजयश्री निश्चय ही समरसेन को वरण करेगी। मेरे भीतर यह आशा बंध गई कि देश के अन्दर अराजकता नष्ट होकर शांति क़ायम हो जाएगी। ऐसा एक शुभ समय निकट आया है। इसलिए अब उस दुष्ट नरवाहन की कुटिल राजनीति की वजह से कुंडलिनी द्वीप के निवासियों को यातनाएं झेलने की जरूरत न पड़ेगी।

मैं यों सोच ही रहा था कि शत्रु सैनिक हाहाकार करते तितर -बितर हो भागते

दिखाई दिये। समरसेन के अश्वारोही सैनक उनका पीछा करते अपने भालों से उनका अंत करने लगे। पैदल सैनिक अपने साथी घायल सैनिकों में पट्टियां बांध कर उनकी मदद कर रहे थे। कुछ लोग समीप के झरने में उतर कर अपनी प्यास बुझा रहे थे।

मैं यों विचार कर रहा था कि दुर्ग के बुर्ज से नीचे उतर कर नगर के दर्वाजे खुलवा दूं। क्यों कि विजय की खुशी में लौटने वाले समरसेन और उनके सैनिकों का भव्य स्वागत करने की जिम्मेदारी मेरी थी। मगर आश्चर्य की बात थी कि मैं बुर्ज पर से मुड़ा ही था कि समरसेन की सेना के भीतर विजय घोष के बदले हाहाकार मच गये। मैं पल भर के लिए निश्चेष्ट हो वहीं पर खड़ा रह गया। युद्ध क्षेत्र में एक ऊँचे प्रदेश के चतुर्दिक सैनिक इकट्ठे होने लगे। मैं उस विचित्र परिणाम पर चकित था। इस बीच दस अश्वारोही सैनिक बड़ी तेजी के साथ शहर के द्वारों की तरफ़ अपने घोड़ों को दौड़ाते चले आ रहे थे। मेरी समझ में न आया कि आखिर इसका कारण क्या हो सकता है?

मेरा मन घबरा गया। मैं यह सोच कर डर गया कि कोई अनहोनी घटना हो गई है। मुझे लगा कि नगर के द्वारों की तरफ़ बढ़े चले आने वाले घुड सवार कोई संदेश वाहक होंगे। मैं जल्दी-जल्दी बुर्ज पर से उतरा,

अपने घोड़े पर सवार हो कुछ अपने अनुचरों को साथ लेकर नगर के द्वार के पास पहुँचा और क़िले के दर्वाजे खुलवा दिये। उसी वक़्त दस घुड सवार तेजी के साथ नगर में प्रवेश करते हुए एक स्वर में चिल्लाने लगे–"महाराजा नरवाहन की जय।"

तत्काल मैं ने भांप लिया कि हमारे विरुद्ध कोई विद्रोह हो गया है। "ये लोग विद्रोही हैं। इनका अंत करो।" चिल्लाते मैं ने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया और अपनी तलवार से दो सैनिकों को मौत के घाट उतारा। मेरे अनुचरों ने नरवाहन के बाक़ी आठ अश्वारोहियों का सामना किया। रास्तों पर क़तार बांधे सैनिक और हथियारों से लैस जनता भी पल भर केलिए जड़वत खड़ी रह गई। दूसरे ही पल में कुछ सैनिक तलवार खींच कर आगे बढ़ते चिल्ला उठे–"महाराजा नरवाहन मिश्र की जय!"

आयुधधारी जनता में कोलाहल छा गया। उनके बीच से कुछ युवक आगे आये और "समरसेन की जय!" पुकारते सैनिकों पर टूट पड़े।

उस वक़्त जो हलचल मची, उसे हम लड़ाई नहीं मान सकते। क्यों कि प्रत्येक हथियार बंद एक व्यक्ति दूसरे आयुध धारी केलिए एक दुश्मन था। उसके बाजू में लड़ने वाला व्यक्ति उसका दुश्मन है या मित्र है, बगल वाला बिलकुल नहीं जानता था। कुछ लोग समरसेन के जयकार कर रहे थे तो कुछ और लोग नरवाहन मिश्र के। उस कोलाहल में इस बात का पता लगाने का मौक़ा तक न था कि किस के मूँह से कौन सा नारा निकल रहा है, यह जानकर निर्णय कर ले कि बगल वाला दुश्मन है या दोस्त।

मैं लड़ाई जारी करते हुए अपने अनुचरों के साथ धीरे-धीरे क़िले के द्वार की ओर वापस लौटा। द्वारपाल ने मुझे पहचान लिया और मेरे भीतर पहुँचते ही दर्वाजे बंद किये।

इस तरह मैं उस भगदड़ से बच कर क़िले में प्रवेश कर पाया।''

बाहर के मार्गों पर भीषण युद्ध चल रहा था। सैनिकों में थोड़े से लोग समरसेन के पक्ष में और बाक़ी लोग नरवाहन के पक्ष में थे। मुझे लगा कि युद्ध क्षेत्र की वास्तविकता का पता न लगाने पर यह लड़ाई जारी रहेगी। मैं ने अपने अनुचरों में से एक को बुलाकर गुप्त द्वार से उसे लड़ाई के मैदान में भेजा। अब इस बात का फ़ैसला होना था कि नगर के नरवाहन के समर्थक सैनिकों का आगे का कार्यक्रम क्या है?। उनका सामना करने वालों का अंत करने के बाद वे लोग क्या क़िले पर कब्जा करने की कोशिश करेंगे या नहीं? मैं अपनी सारी ताक़त लगा कर क़िले की रक्षा करना चाहता था। मुझे मालूम था कि मेरे थोड़े से अनुचर और किले के भीतर के चालीस-पचास सैनिक बड़ी कोशिश के बावजूद भी क़िले को बचाने में ज़्यादा देर टिक नहीं सकते। लाचारी की हालत में पहले की तरह खूंख्वार जानवरों को कटघरों से बाहर छोड़ देना ही एक मात्र उपाय मुझे प्रतीत हुआ।

एक घंटा बीत गया। बाहर की गलियों में लड़ाई अभी तक चल रही थी। मैंने क़िले के गुप्त द्वार से जिस सैनिक को बाहर भेजा था, वह थोड़ी ही देर में वापस लौट आया। वह लड़ाई के मैदान से जो खबर लाया, वह शूल की तरह मेरे कलेजे पर चुभ गई।

दुश्मन के साथ जो भयंकर लड़ाई हुई, उसमें समरसेन बुरी तरह से घायल हो चुका था। इस पर तब तक उप सेनापति का पद संभालने वाले नरवाहन मिश्र ने सेना का नेतृत्व स्वीकार करके अपने को कुंडलिनी द्वीप के राजा घोषित किया। यही खबर सुनाने के लिए उसके कुछ अनुचरों ने नगर में प्रवेश किया था।

मैंने व्यग्र होकर पूछा—''समरसेन की हालत कैसी है? क्या वह बोलने की हालत
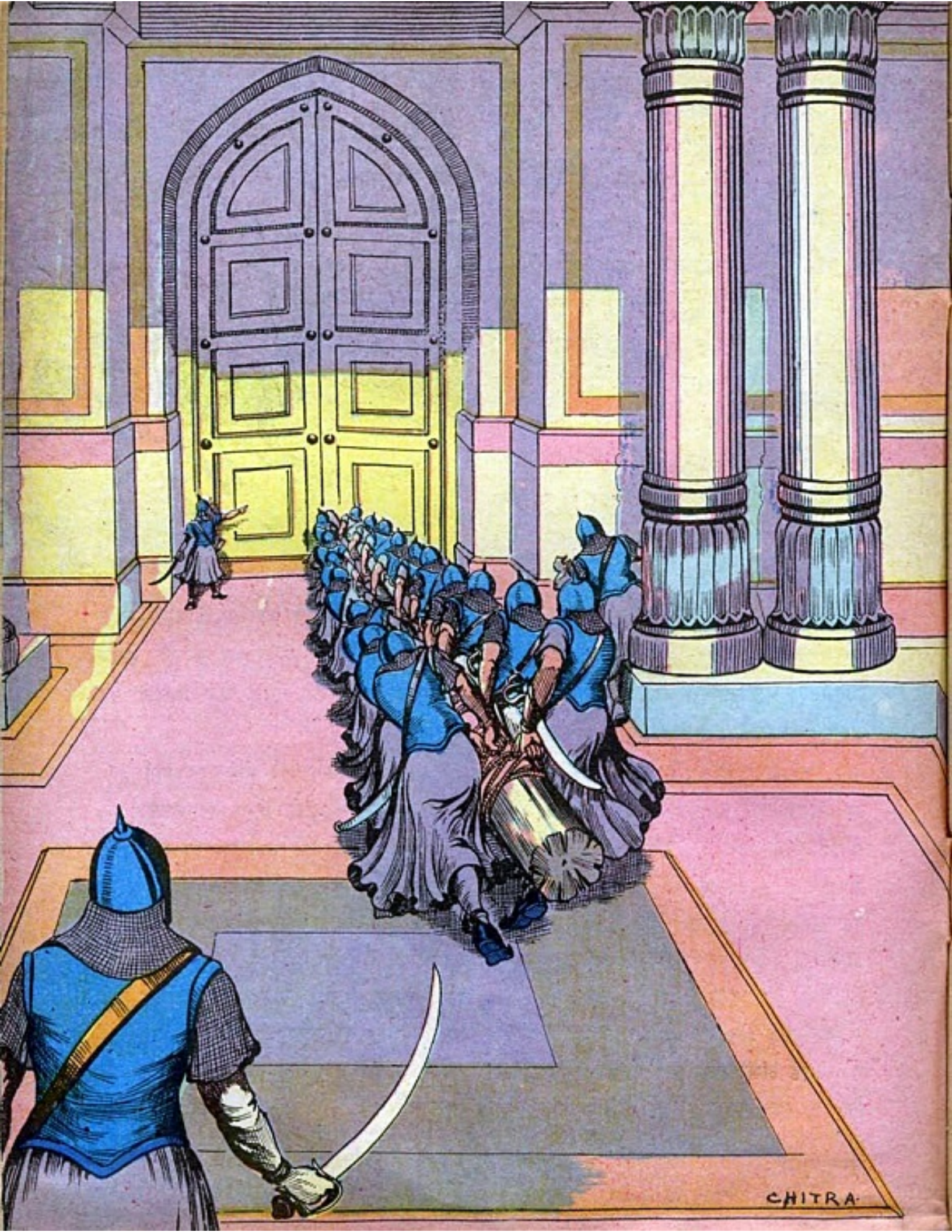
में है या बेहोशी की; जल्दी-जल्दी मुझे पूरी सूचना दो!"

"वे बुरी तरह से घायल हो चुके हैं। उनकी हालत अब-तब में है। यही मौक़ा पाकर नरवाहन ने अपने को राजा घोषित किया है। सेना के छोटे-छोटे सरदार उसका समर्थन कर रहे हैं!" सैनिक ने बताया।

मैं समझ गया कि हालत बड़ी नाज़ुक है। थोड़ी देर में नरवाहन खुद अपनी सेना के साथ नगर पर धावा बोल देगा। ऐसी हालत में उसका लोहा लेने की ताक़त कुंडलिनी द्वीप का कोई भी व्यक्ति नहीं रखता। वह मुझ से मन ही मन जलता भी है। इसलिए मैंने सोचा कि जहाँ तक हो सके, जल्दी क़िले को छोड़ कर अपने अनुचरों के साथ गुप्त द्वार से बाहर निकल जाना उचित होगा। इसे छोड़ कोई दूसरा उपाय नहीं है!

मैंने अपने अनुचरों को एक जगह इकट्ठा करके सारी हालत उन्हें बता दी। सबने मेरे निर्णय का समर्थन किया। अब मेरा कर्तव्य सिर्फ़ चुपचाप गुप्त द्वार से बाहर निकल कर किसी सुरक्षित प्रदेश में पहुँच जाना ही था। नरवाहन मिश्र भी इस गुप्त द्वार की जानकारी रखता है। इसलिए बड़ी सतर्कता के साथ मुझे यह कार्यक्रम संपन्न करना था।

दूसरे ही क्षण मैं अपने अनुचरों को चेतावनी देकर राज महल के भीतर चला गया। मैं इस प्रकार थोड़ी ही दूर गया था कि क़िले के द्वार की ओर से जोर शोर की चिल्लाहटें सुनाई दीं। मैंने पीछे मुड़कर देखा, नरवाहन के दल के सैनिक द्वार के लोहे की परतों पर बड़े-बड़े लकड़ों से प्रहार करते उन्हें तोड़ने की हर तरह से पूरी कोशिश कर रहे हैं! अगर वे लोग अपनी इस कोशिश में सफल निकले तो क़िले को बचाना नामुमक़िन है, साथ ही हमारी जानें भी आफ़त में फँस सकती हैं!

मेरे दिमाग में चट से एक उपाय सूझा। मैं ने मृगशाला के अधिकारी को बुलवा कर

खूंख्वार जानवरों को कटघरों से बाहर छोड़ने का आदेश दिया। वह मेरी तरफ़ ताकते मुस्कुरा कर बोला– "शिवदत्तजी, मैं नहीं जानता कि आप के दुश्मन कौन हैं? मगर वे लोग आप से कहीं तेज बुद्धि वाले मालूम होते हैं। घंटे भर पहले मैं उन जानवरों के खाने का प्रबंध करने कटघरों के पास पहुँचा। आश्चर्य की बात यह थी कि उनमें से अधिकांश जानवर मरे पड़े थे। कुछ जानवर पीड़ा के मारे कराह रहे थे।"

मैं चुपचाप कटघरों के पास दौड़ पड़ा। मृगशाला के अधिकारी की बातों में कोई असत्य न था। मगर यह कहना मुश्किल था कि उन जानवरों को जहर खिलानेवाला व्यक्ति मृगशाला का अधिकारी है या नरवाहन मिश्र का कोई अनुचर? मेरे पास इस घटना की अच्छी तरह से जाँच कराने का वक़्त न था। फिर भी आगे की सतर्कता के लिए मैं ने मृगशाला के अधिपति के हाथ-पैर बंधवा कर एक कमरे के कोने में डलवा दिया, तब गुप्त द्वार की ओर दौड़ पड़ा।

गुप्त द्वार राजा चित्रसेन के शयन कक्ष में था। वहाँ पर एक पतला सुरंग शुरू होता है, क़िले के कंदक के नीचे से होते हुए बाहर एक कोस की दूरी पर स्थित जंगल में एक बड़े वृक्ष के तने में उसका अंत होता है।

मैं जब अपने अनुचरों के साथ राजा चित्रसेन के शयन कक्ष में पहुँचा और वहाँ से सुरंग के रास्ते बाहर जाने की योजना पर विचार करने लगा, तब मुझे उनके मृत शरीर की याद हो आई। अब तक दहन संस्कार के बिना उनका शव एक कमरे में पड़ा हुआ था, उन का शासन और मृत्यु आखिर दुखांत के रूप में परिणत हुई है। इस की कल्पना हम लोग सपने में भी कर नहीं सकते थे।

मैं ने गुप्त द्वार खोल कर आगे की ओर देखा–सारा प्रदेश मुझे गहरे अंधेरे से भरा हुआ दीख पड़ा। (और है।)
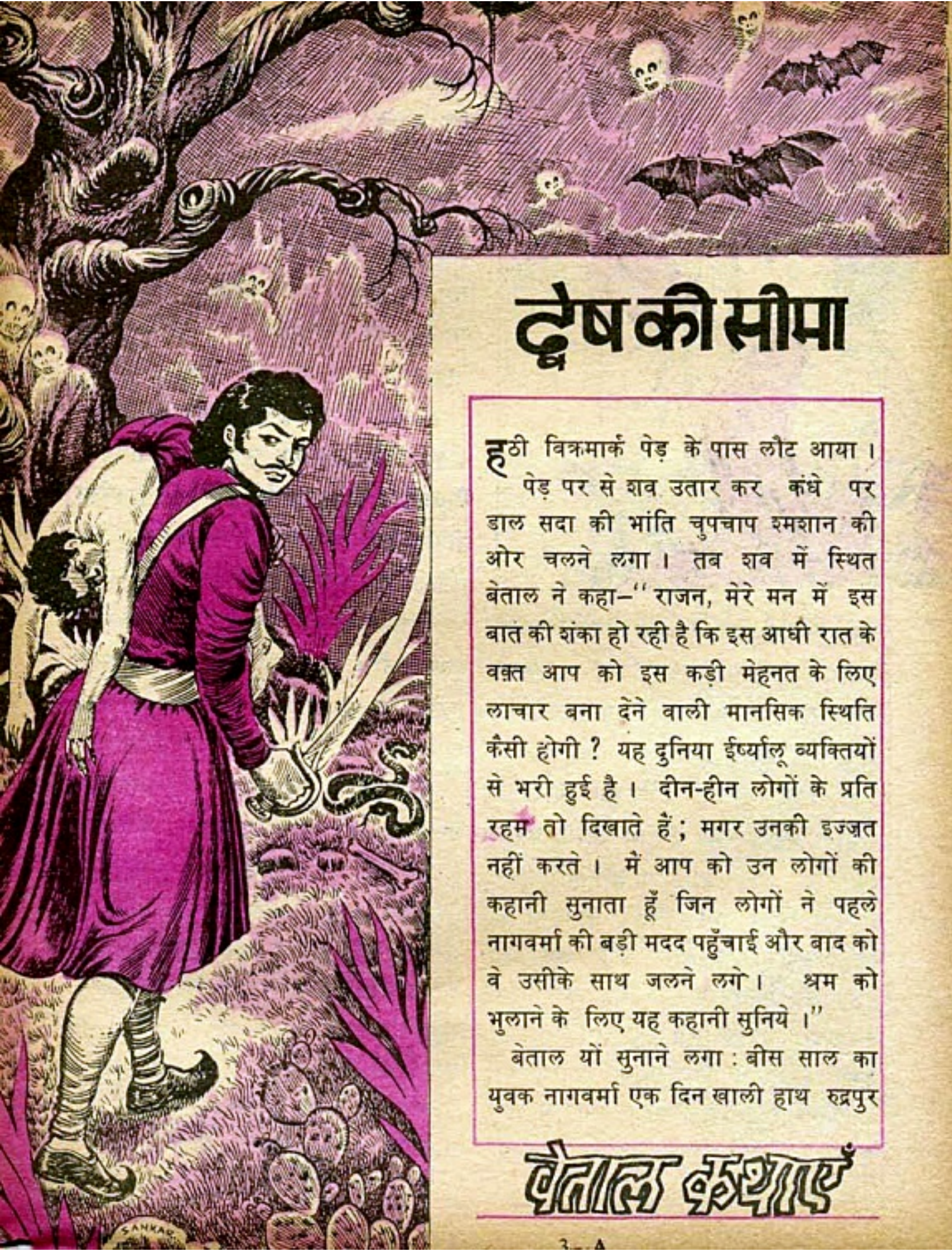
द्वेष की सीमा

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मेरे मन में इस बात की शंका हो रही है कि इस आधी रात के वक़्त आप को इस कड़ी मेहनत के लिए लाचार बना देने वाली मानसिक स्थिति कैसी होगी ? यह दुनिया ईर्ष्यालू व्यक्तियों से भरी हुई है। दीन-हीन लोगों के प्रति रहम तो दिखाते हैं; मगर उनकी इज़्ज़त नहीं करते। मैं आप को उन लोगों की कहानी सुनाता हूँ जिन लोगों ने पहले नागवर्मा की बड़ी मदद पहुँचाई और बाद को वे उसीके साथ जलने लगे। श्रम को भुलाने के लिए यह कहानी सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा : बीस साल का युवक नागवर्मा एक दिन खाली हाथ रुद्रपुर

बेताल कथाएँ

नामक गाँव में आया। उसे गोवर्द्धन नामक किसान ने अपने घर आश्रय दिया। उसकी सिफ़ारिश पर मुखिये ने नागवर्मा को चार बीघे जमीन इजारे पर दी।

नागवर्मा खेतीबाड़ी करते हुए गाँव के लोगों के काम-काजों में हाथ बटाया करता था। दो साल के पूरा होते-होते उसने दो बीघे जमीन खरीद ली। नागवर्मा की इस तरक्क़ी पर गोवर्द्धन बड़ा खुश हुआ और उसे खेतीबाड़ी संबंधी बारीकियाँ समझाईं। गोवर्द्धन के यहाँ दस बीघे तर जमीन और पांच बीघे आम के बगीचे थे।

तीन-चार सालों के अंदर नागवर्मा खेती के काम में बड़ा कुशल निकला। इस पर उसी गाँव के एक रईस शिवप्रसाद ने अपनी बेटी लक्ष्मी का विवाह नागवर्मा के साथ करने की इच्छा प्रकट की। शिवप्रसाद पचास-साठ बीघे तर जमीन और पंद्रह-बीस बीघे आम के बगीचों का मालिक था। तिस पर लक्ष्मी उसके इकलौती बेटी थी। नागवर्मा की अक़्लमंदी और किफ़ायत पर शिवप्रसाद बड़ा प्रभावित हुआ।

नागवर्मा ने गोवर्द्धन की सलाह मांगी। गोवर्द्धन यह सोच कर डर गया कि नागवर्मा शिवप्रसाद की कन्या के साथ विवाह करेगा तो वह भी एक रईस बन जाएगा, तब उसकी बात मानेगा नहीं।

"नागवर्मा, घर जमाई दामाद बनने से बढ़कर नीच काम एक मर्द के लिए दूसरा नहीं हो सकता। मेरे लिए कतई यह शादी पसंद नहीं है।" गोवर्द्धन ने समझाया।

नागवर्मा ने यह बात शिवप्रसाद को बताई। शिवप्रसाद ने कहा—"मेरी बेटी लक्ष्मी तुम्हारे साथ शादी करना चाहती है। तुम्हें घर जमाई दामाद बन कर रहने की ज़रूरत नहीं है। मैं अपनी सारी जमीन-जायदाद तुम्हारे नाम लिख दूंगा। तुम्हारी मेहर्बानी पर मैं अपने दिन काटूंगा। तुम इस शादी को मान जाओ।"

नागवर्मा ने मान लिया। लक्ष्मी और नागवर्मा का विवाह ठाठ से संपन्न हुआ।

उस दिन से गोवर्द्धन ने नागवर्मा के साथ बात करना बंद किया। इस पर नागवर्मा बड़ा दुखी हुआ।

एक दिन गोवर्द्धन के घर जाकर बोला–"महाशय, मेरी कोई गलती हो, तो माफ़ कीजिये। मैं आप की मेहर्बानी की वज़ह से ही इस हालत तक पहुँच पाया हूँ। आप का वात्सल्य न रहा, तो मैं पल भर केलिए भी इस गाँव में रहना नहीं चाहता।"

गोवर्द्धन नागवर्मा की विनयशीलता पर खुश होकर बोला–'नागवर्मा, तुम अभी तक मेरे उपकार की बात भूल नहीं गये हो? दिन-ब-दिन तुम्हारी उन्नति हो, यही मेरा आशीर्वाद है।"

उस साल वक़्त पर पानी न बरसा, जिससे अच्छी फ़सल न हुई। नागवर्मा पहले ही जागरूक था, इसलिए उसके खेतों में अच्छी पैदावर हुई। गोवर्द्धन के खेतों की फ़सलें खराब हो गईं, इस वजह से नागवर्मा के प्रति उसके मन में जलन पैदा हुई।

यह खबर लगते ही नागवर्मा एक दिन गोवर्द्धन के घर पहुँचा। गोवर्द्धन गुस्से में आकर बोला–"नागवर्मा, तुम्हारा व्यवहार मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगता। खेतीबाड़ी में तुम सफल निकले, लेकिन तुम खुदगर्ज़ हो। मैंने तुम्हें खेतीबारी संबंधी सारी बारीकियाँ बताई हैं, मगर तुम मुझे बताते नहीं हो।"

नागवर्मा विनयपूर्वक बोला–"मेरे खेतों में अगर अच्छी फ़सल हुई है तो यह आप की कृपा का फल है। साथ ही क़िस्मत ने साथ दिया।"

यह जवाब पाकर गोवर्द्धन बड़ा खुश हुआ और वह नागवर्मा के साथ पूर्ववत् व्यवहार करने लगा। लेकिन उसके मन में यह शंका पैदा हुई कि अगर नागवर्मा हमेशा के लिए खेतीबाड़ी में लगा रहा तो वह कुछ ही सालों में सारे गाँव को ही खरीद सकता है।

एक दिन मौक़ा पाकर गोवर्द्धन नागवर्मा से बोला–"नागवर्मा, तुमने बहुत-कुछ कमाया है, फिर भी तुम दिन-रात कमर तोड़ मेहनत क्यों करते हो? तुम कलाओं के प्रति अपनी अभिरुचि बढ़ा लो। तुम सहज ही अक़्लमंद हो, कोशिश करोगे तो सारे देश में तुम्हारा नाम फैल जाएगा।"

कविता के प्रति नागवर्मा के दिल में बड़ी दिलचस्पी थी। कुछ साल तक उसने कई काव्य पढ़े, आखिर खुद एक काव्य लिख कर गाँववालों को सुनाया। सारी कविता सुनकर एक पंडित ने उसे भूलों की पिटारी बताई। इस पर सभी लोग हंस पड़े। गोवर्द्धन मन ही मन खुश हुआ।

मगर नागवर्मा की लगन बनी रही। उसने पंडित के घर जाकर निवेदन किया–"महानुभाव, आपने मेरी कविता का मजाक़ उड़ाया। इस बात का मुझे थोड़ा भी दुख नहीं है, आप जो भी धन मांगेंगे, मैं देने को तैयार हूँ। कृपया मेरे काव्य की गलतियाँ बताइये; मुझे अच्छी भाषा और शैली सिखला दीजिए।"

पंडित ने नागवर्मा को प्रोत्साहन नहीं दिया, उल्टे निराश करते हुए बोला–"तुम पांडित्य के द्वारा कविता को साध नहीं सकते। कविता तो जन्म के साथ ही प्राप्त होती है।"

इस पर भी नागवर्मा निराश नहीं हुआ। पंडित के यहाँ जाकर पढ़ने लगा। छे महीनों के अन्दर उसने अपनी भाषा को

सुधार लिया। इसके बाद प्रमुख कवियों के काव्यों का अध्ययन कर रचना की खूबियों से परिचय प्राप्त किया।

साल भर के अंदर नागवर्मा ने फिर से एक काव्य लिखकर पंडित को दिखाया। पंडित ने काव्य पढ़कर अपनी राय दी–"तुम्हारी भाषा सुधर गई है। इसमें दोष नहीं हैं। इतने मात्र से यह एक अच्छा और महान काव्य नहीं हो सकता।"

इसके बाद नागवर्मा ने अपना काव्य गाँववालों को पढ़कर सुनाया। उस समय एक विचित्र घटना घटी। छद्म वेष में देशाटन करने वाले राजा भी उस सभा में पहुँचे और नागवर्मा का काव्य सुना। उन्हें वह काव्य बड़ा अच्छा लगा।

राजा ने उसी समय जनता को अपना परिचय देकर कहा–"कई कवियों ने संस्कृत के काव्यों का हिन्दी में अनुवाद किया है; मगर इस तरह का एक पूर्ण मौलिक काव्य मैं पहली बार सुन रहा हूँ। तुम राजधानी में आ जाओ, उचित रूप से मैं तुम्हारा सत्कार करूँगा।"

राजा की तारीफ़ सुनकर बहुत से लोग आश्चर्य में आ गये। पर पंडित और गोवर्द्धन ने नागवर्मा के साथ बातचीत करना बंद किया। नागवर्मा ने उनके घर जाकर समझाया कि यह सब उन्हीं लोगों की कृपा का फल है। तब जाकर उनकी जलन थोड़ी शांत हुई। राज-सम्मान पाने के लिए जाते वक्त नागवर्मा अपने साथ गोवर्द्धन और पंडितजी को भी बुला ले गया। नागवर्मा की प्रार्थना पर राजा ने उनका भी सम्मान किया। नागवर्मा की वजह से राज-सम्मान पानेके बाद वे दोनों नागवर्मा के प्रति आदर की भावना रखने लगे। उस दिन से नागवर्मा से ईर्ष्या करने के बदले वे दोनों उसके यश को देख प्रसन्न होने लगे।

उस हालत में नागवर्मा ने एक दिन अपनी पत्नी से कहा–"आइंदा हम ज्यादा दिन इस गाँव में नहीं रह सकते। किसी दूसरे गाँव में जाना होगा। जमीन-जायदाद

बेचने की कोशिश कर रहा हूँ।" नागवर्मा की पत्नी अवाक् रह गई।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "क्या नागवर्मा का व्यवहार कुछ विचित्र और असंबद्ध मालूम नहीं होता? इस समय तो वह गाँव के प्रत्येक व्यक्ति का आदर पा रहा है न? अगर उसे गाँव छोड़ना ही था तो उस वक़्त छोड़ना था, जब कि उसके साथ जलने वाले लोग थे। ऐसी हालत में इस वक़्त वह गाँव छोड़कर क्यों जाना चाहता है? इस संदेह का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

विक्रमार्क ने इसका उत्तर यों दिया– "नागवर्मा जैसे बुद्धि-बल और लगन रखने वाले लोग बिरले ही होते हैं। कोई भी व्यक्ति पानी के बहाव में पड़कर आसानी से तैरते हुए नदी को पार कर सकता है। पर नागवर्मा जैसे लोग धारा के विपरीत तैरने वाले स्वभाव के होते हैं। ऐसे लोगों के जीवन-पथ में जब-तब कोई न कोई रोड़ा उपस्थित होते रहना है। वरना उन्हें ज़िंदगी सारहीन प्रतीत होगी। गाँव के गोवर्द्धन की ईर्ष्या तथा पंडित की अवहेलना की वजह से ही नागवर्मा ने बड़ी मेहनत की और खेतीबारी में निपुण कहलाया। साथ ही कवि के रूप में राज-सम्मान पाया। उसके मन में और बड़ा व्यक्ति बनने की अभिलाषा है! उसने अपने गाँव के अन्दर आज तक सिर्फ़ ईर्ष्या करनेवालों को ही देखा, पर उसके साथ स्वस्थ प्रतियोगिता रखनेवालों को नहीं। उन ईर्ष्यालुओं को वह अपने प्रशंसक बना पाया। उसके भीतर इससे कहीं ज्यादा यश-प्रतिष्ठा पाने की इच्छा की प्रेरणा ईर्ष्यालुओं से प्राप्त नहीं हो सकती, उसके साथ स्पर्धा करने वालों से ही मिल सकती है। इसीलिए नागवर्मा ने दूसरे गाँव या शहर में जाने का निश्चय किया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
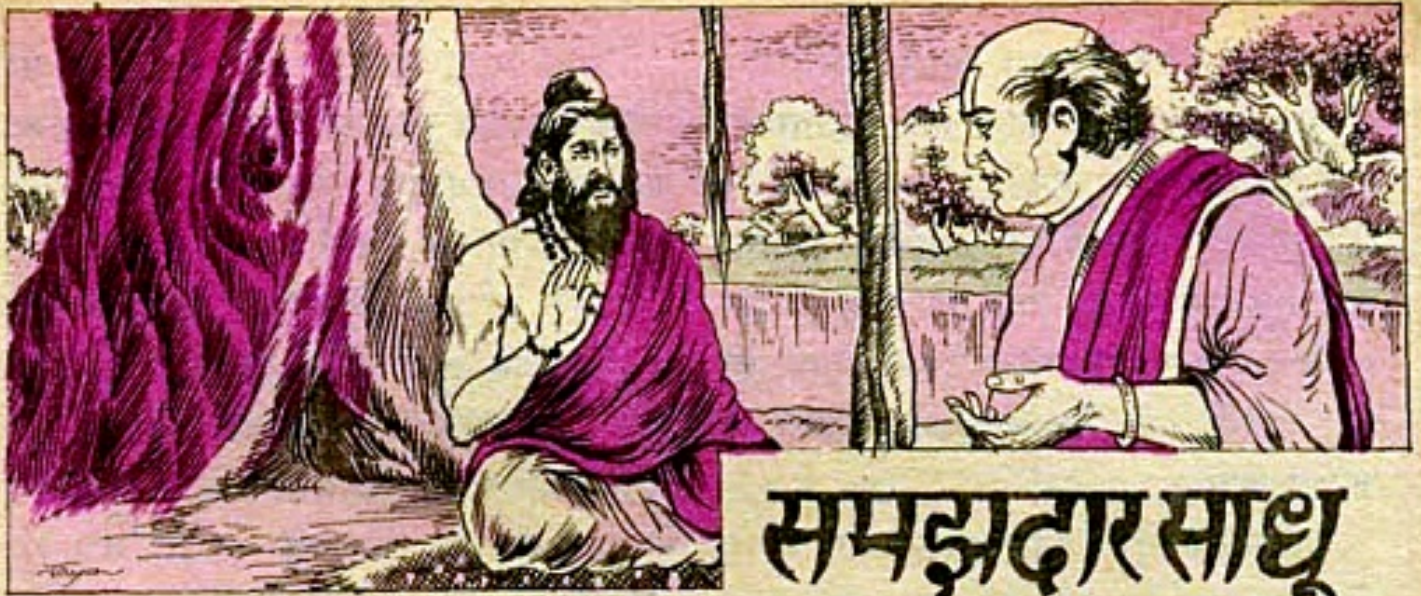
समझदार साधू

एक गाँव में रामलाल और श्यामलाल नामक दो व्यापारी थे। व्यापार को लेकर दोनों के बीच जो स्पर्धा थी वह धीरे-धीरे दुश्मनी में बदल गई।

एक दिन उस गाँव के तालाब की मेंड पर बरगद के नीचे एक सन्यासी ने आकर अपना आसन जमाया। गाँववाले उनको अपनी अपनी विपदाएँ सुनाकर उनसे उबारने की मदद मांगने लगे। सन्यासी उन्हें मंत्र फूंक कर भभूत और तावीज़ दिया करते थे। उनके द्वारा कई लोगों का उपकार भी होने लगा।

एक दिन शाम को सन्यासी को अकेले देख रामलाल उसके पास पहुँचा। सन्यासी ने पूछा—"बेटे, बताओ, तुम्हें कैसी तक़लीफ़ें हैं? शारीरिक पीड़ाएँ हैं या ग्रहों की?"

"साधू महाराज, ऐसी कोई पीड़ा मुझे नहीं है, एक दुष्ट आदमी मेरी मानसिक शांति में भंग डाल रहा है। वह मेरे साथी व्यापारी श्यामलाल है। दुष्टों को नुक़सान पहुँचाना अन्याय नहीं कहलाता है न?" रामलाल ने जवाब दिया।

रामलाल की बातें सन्यासी की समझ में न आईं, उसने पूछा—"तुम अपने मन की बातें साफ़-साफ़ क्यों नहीं बताते? मैं तुम्हारा रहस्य कहीं प्रकट न करूँगा।"

"इसी गाँव में श्यामलाल नामक एक व्यापारी है। वह अव्वल दर्जे का धूर्त है। आप मुझे एक ऐसे मंत्र का उपदेश दीजिए जिसके प्रभाव से श्यामलाल को भारी नुक़सान हो जाय।" रामलाल ने कहा।

सन्यासी पल भर के लिए चकित रह गया, फिर बोला—"तुमने ऐसी कामना की जो नहीं करनी चाहिए। लेकिन तुम उस आदमी को धूर्त बताते हो, इसलिए कोई

सुदर्शन वर्मा

बात नहीं। पर बताओ, अगर श्यामलाल को एक हज़ार रुपये का नुक़सान होगा तो क्या तुम खुश हो जाओगे?"

"एक हज़ार रुपये का नुक़सान? इतना बड़ा नुक़सान मैं तो उठा सकता हूँ; पर समझ लीजिए कि इससे उसकी कमर ही टूट जाएगी।" रामलाल ने उत्साह में आकर कहा।

"तब तो तुम कान खोल कर सुनो, मैं आज रात को एक मंत्र का पाठ करके एक यंत्र तैयार करूँगा, इसके वास्ते एक हज़ार रुपये का खर्च बैठेगा।"

सन्यासी के मुँह से ये शब्द निकलने की देर थी कि रामलाल घर से एक हज़ार रुपये ले आया और सन्यासी के हाथ दिया। सन्यासी ने यंत्र ले जाने के लिए रामलाल को दूसरे दिन सूर्योदय के समय मिलने को कहा।

उसी दिन रात को श्यामलाल सन्यासी से मिला। उसे बताया कि रामलाल बड़ा ही दुष्ट है, इसलिए उसे नुक़सान पहुँचाने के लिए कोई मंत्र सिखला दे।

"सुनो भाई, मंत्रों का अगर सही ढंग से उच्चारण नहीं हुआ तो प्राणों के निकल जाने की संभावना रहती है। मैं खुद तुम्हारे लिए एक यंत्र तैयार करके देता हूँ। रामलाल का ज़रूर नुक़सान होगा। इस यंत्र के लिए तुम्हें एक हज़ार रुपये देना है।" सन्यासी ने समझाया।

श्यामलाल ने एक हज़ार रुपये सन्यासी के हाथ दिये। सन्यासी ने उसे यंत्र ले जाने के लिए दूसरे दिन सबेरे आने को बताया।

दूसरे दिन सूर्योदय के समय रामलाल और श्यामलाल की बरगद के पास मुलाकात हुई और दोनों आश्चर्य में आ गये। बरगद के तने पर एक कागज़ लटकते दिखाई दिया। उसमें यों लिखा हुआ था—"मैं दूसरे प्रदेश में जा रहा हूँ। तुम दोनों एक दूसरे को नुक़सान पहुँचाना चाहते थे, इस प्रकार तुम दोनों की इच्छाओं की पूर्ति हो गई। इसलिए मेरे यंत्र की तुम दोनों के लिए ज़रूरत नहीं है।"

फायदे का सौदा

भद्रगिरि नामक गाँव में भजनलाल और ईश्वरलाल नामक दो किसान रहा करते थे। उन दोनों में गहरी दोस्ती थी, लेकिन एक दिन खेत की मेड़ को लेकर उनके बीच झगड़ा शुरू हुआ और आखिर वे जानी दुश्मन बन गये। भजनलाल ने किसी बहाने ईश्वरलाल को पिटवाने का निर्णय किया।

उसी गाँव में जगतसिंह नामक एक पहलवान था। भजनलाल ने उसके हाथ में दो सौ रुपये थमाकर ईश्वरलाल की पिटाई करने को कहा। जगतसिंह ने मान लिया।

उसी दिन शाम को पड़ोसी गाँव से लौटने वाले भजनलाल पर जगतसिंह ने वार किया। भजनलाल पीड़ा के मारे चीखते हुए बोला–"अरे जगत, यह तो सरासर अन्याय है। ईश्वरलाल को पीटने के लिए मैंने तुम्हें दो सौ रुपये दिये, तुम उल्टे मुझको ही पीट रहे हो?"

जगतसिंह खिलखिला कर हँसकर बोला–"तुम्हारा सौदा मेरे लिए ठीक न बैठा। ईश्वरलाल ने मुझे चार सौ रुपये दिये हैं, ये ले लो तुम्हारे दो सौ रुपये।" कहकर जगतसिंह भजनलाल के हाथ दो सौ रुपये रखकर चला गया।

गालियाँ हैं, शाप नहीं

एक गाँव में एक महाजन रहा करता था ।

वह अव्वल दर्जे का धूर्त था । इसलिए उसे देवता नहीं दिखाई देते थे, पर भूत जरूर दिखाई देते थे ।

भूतों को देख अच्छे लोग जरूर डरते हैं, लेकिन धूर्त लोग नहीं डरते ।

महाजन ने उस गांव की एक गरीब औरत को कर्ज दिया । उस औरत के छे बच्चे थे । उसका पति एक दिन अचानक मर गया । उस औरत के कोई आमदनी न थी, इस वजह से उसने महाजन के यहाँ दो साल पहले तीस रुपये उधार लेकर अपना मकान गिरवी रखा । दूसरे साल वह अपना पुराना कर्ज तो चुका न पाई, उल्टे पंद्रह रुपये और उधार लिया । महाजन ने उस उधार की रक़म का ब्याज लगाया, ब्याज का ब्याज लगा कर कुल एक सौ रुपये का हिसाब दिया । गरीब औरत का मकान सौ से ज्यादा क़ीमत का होगा ; फिर भी महाजन के मन में यह कुबुद्धि पैदा हुई कि उस औरत से मकान खाली करवा कर उस पर क़ब्जा कर ले । इसी ख्याल से वह अपने घर से निकल पड़ा ।

उसी वक़्त एक भूत महाजन के घर के सामने से निकल रहा था । महाजन ने भूत से पूछा–"बात क्या है ? आज कहीं हमारे गांव के किसी पर शामत तो नहीं आ पड़ी है?"

भूत मुस्कुरा कर बोला–"इधर मेरे तुम्हारे गाँव आये बहुत दिन हो गये हैं । खाने की खोज में इधर चला आया । तुम कहाँ जा रहे हो ?"

महाजन ने बताया कि वह एक गरीब औरत के मकान पर क़ब्जा करने जा रहा है । उसने जो उधार दिया है, वह बढ़ते-बढ़ते कैसे सौ रुपये तक पहुँचा है । सारी कहानी भूत को सुनाई ।

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

"उफ़ ! दो साल के पूरा होने के पहले ही मूल धन से ब्याज ज्यादा चढ़ गया है। तुम मानव लोग हमेशा हमारी शिकायत किया करते हो, मगर अब मुझे लगता है कि हम से भी ज्यादा खून चूसने वाले लोग मानव हैं।" भूत ने कहा।

महाजन भूत की बातें सुन नाराज़ तो नहीं हुआ, उल्टे उसे अपनी करनी पर अभिमान हो आया। उसे मालूम था कि धन बटोरने में वह कैसे प्रवीण है।

बातचीत करते वे दोनों थोड़ी दूर आगे बढ़े। एक झोंपड़ी के अन्दर से उन्हें यह आवाज़ सुनाई दी। एक औरत अपने बेटे को गाली दे रही थी–"अरे, तुझे भूत निगल जाय। कितनी बार तुम्हें समझाया कि किवाड़ अच्छी तरह से बंद किया करो, देखो, आज बिल्ली सारा मक्खन कैसे चाट गई है।"

"लो, तुम्हें खाना मिल गया। वह औरत अपने बेटे को निगलने के लिए तुम्हारे हाथ सौंप रही है।" महाजन ने भूत से कहा।

भूत हंसकर बोला–"यह तो सिर्फ़ उस लड़के को डराने के लिए कही गई बात है ! यह गाली उसके दिल से निकली नहीं है। वह अपने बेटे को हमें सचमुच सौंपना नहीं चाहती। मैं तो इस बात का अच्छा अनुभव रखता हूँ।"

थोड़ी दूर और आगे बढ़ने पर पति-पत्नी आपस में झगड़ते हुए दिखाई पड़े। पति

कह रहा था–"तुझे भूत निगल जाय।" इस पर महाजन बोला–"सुनो, यह तो बड़ा अच्छा मौका है। एक साथ दो जनों को निगल सकते हो।"

"ये तो सिर्फ़ गालियां हैं। शाप नहीं। चलो, हम अपने रास्ते चले चले।" भूत ने समझाया।

इसके बाद वे दोनों थोड़ी दूर चल कर गरीब औरत के घर पहुँचे। महाजन ने दर्वाजे पर दस्तक दिया। गरीबिन ने किवाड़ खोल कर सामने महाजन को खड़े देखा और पूछा–"कहो बेटा, कैसे आना हुआ ?"

"काकी, वैसे कोई खास बात नहीं है। तुम्हारा कर्ज मूल धन और चक्र ब्याज को मिलाकर सौ रुपया हो गया है। तुमने यह मकान मेरे नाम गिरवी रखा। दो साल से तुमने एक भी कौड़ी नहीं चुकायी. हां, तुम भी कहाँ से लाओगी? मकान की क़ीमत कर्ज के बराबर है, इसलिए तुम आज ही यह मकान खाली करके मेरे हवाले कर दो और अपना कर्ज चुका लो। यही बात मैं तुमसे कहने आया हूँ।" महाजन एक साँस में कह गया।

महाजन के मुंह से ये बातें सुनते ही उस गरीब औरत के तन-बदन में आग लग गई। उसने गुस्से में आकर शाप देना शुरू किया–"तुम्हारा पेट जल जाय। तुम्हें भूत निगल जाय। अरे बदमाश, पंतालीस रुपये कर्ज देकर यह मकान हड़पना चाहते हो? ठहरो, अभी तुम्हें उचित सबक़ सिखाता हूँ।" यों कहकर वह मकान के अंदर चली गई।

गरीब औरत ज्यों ही घर के अन्दर जाने को मुड़ी, त्यों ही भूत ने महाजन को झट से निगल डाला और अपने रास्ते चला गया।

गरीब औरत महाजन को पीटने के लिए झाड़ू लेकर आ पहुँची, मगर देखती क्या है? बाहर कोई न था।

"इतनी जल्दी कहाँ चला गया?" यों सोचते गरीब औरत ने किवाड़ बंद कर लिये।

घमण्ड का नतीजा

काशी के राजा ब्रह्मदत्त के शासन काल में बोधिसत्व ने गुत्तिल नामक वैणिक के रूप में जन्म लिया। सोलह साल की उम्र में गुत्तिल ने ऐसी ख्याति प्राप्त की कि सारे जंबू द्वीप में वीणा-वादन में उनकी तुलना कर सकने वाले कोई नहीं हैं। इस पर काशी राजा ने उनको अपने दरबारी वैणिक नियुक्त किया।

इसके कई साल बाद काशी से कुछ व्यापारी व्यापार करने के लिए उज्जयिनी नगर में पहुँचे। गुत्तिल के वीणा-वादन ने काशी राज्य के सभी लोगों में वीणा के प्रति अभिरुचि पैदा की। इसलिए काशी के व्यापारियों का मन वीणा-वादन की ओर झुक गया। उन लोगों ने उज्जयिनी के व्यापारियों से कहा-"हम लोग वीणा का वादन सुनना चाहते हैं। इस नगर के श्रेष्ठ कलाकारों को बुलवा कर वीणा-वादन का आयोजन कीजिए। जो भी खर्च होगा, हम लोग उठायेंगे।"

उज्जयिनी के कलाकारों में मूसिल सब से मशहूर वैणिक थे। इसलिए काशी के व्यापारियों का मनोरंजन करने के लिए उनकी वाद्यगोष्ठी का इंतजाम किया गया। मूसिल अपनी वीणा लेकर व्यापारियों के डेरे पर आ पहुँचे। वीणा की तंत्रियों में श्रुति बिठा कर झंकृत करने लगे। देर तक मूसिल वीणा बजाते रहे, लेकिन काशी के व्यापारियों के चेहरों पर पल भर के लिए भी आनंद की रेखाएँ खिंची नहीं गईं। इस पर मूसिल ने मध्यम श्रुति करके कुछ गीतों का आलाप किया। तिस पर भी व्यापारियों में उत्साह पैदा नहीं हुआ।

आखिर मूसिल ने हताश होकर पूछा-"महाशयो, मैं बड़ी देर से वीणा बजा रहा हूँ, फिर भी आप लोगों के चेहरों पर खुशी की

रेखाएँ देख नहीं रहा हूँ । क्या मेरा वीणा-वादन आप लोगों को पसंद नहीं है? "

काशी के व्यापारी अचरज में आ गये और एक-दूसरे के चेहरे ताकने लगे । उनमें से एक ने कहा–"ओह, आप अभी तक वीणा बजाते रहें? हम यही सोच रहे थे कि आप वीणा की तंत्रियों को ठीक कर रहे हैं ।"

दूसरे ने कहा–"हम सोच रहे थे कि शायद वीणा बिगड़ गई है, तंत्रियाँ ठीक से झंकृत न होकर आप को परेशान कर रही हैं? माफ़ कीजियेगा ।"

ये बातें सुनने पर मूसिल का चेहरा उतर गया, खिन्न होकर बोले–"आप लोगों ने मुझ से भी बहुत बड़े कलाकार का वीणा-वादन सुना होगा । इसी वजह से मेरा वादन आप लोगों को पसंद नहीं आ रहा है । कृपया उस कलाकार का नाम बताइये ।"

"क्या आप ने हमारे काशी राज्य के दरबारी वैणिक गुत्तिल के वीणा-वादन के बारे में नहीं सुना?" व्यापारियों ने पूछा ।

"क्या वे बहुत बड़े विद्वान हैं?" मूसिल ने पूछा ।

"उनकी कला के सामने आप किस खेत की मूली हैं?" व्यापारियों ने कहा ।

"तो मैं तब तक आराम नहीं लूँगा जब तक मैं उनके बराबर का कलाकार न कहलाऊँ? इस वक़्त आप लोगों को मेरे वादन के लिए कोई मूल्य चुकाने की जरूरत नहीं है ।" यह उत्तर देकर मूसिल वहाँ से चले गये । उसी दिन घर से रवाना होकर मूसिल काशी नगर गये और बोधिसत्व के घर पहुँचे ।

बोधिसत्व ने मूसिल से पूछा–"बेटा, तुम कौन हो? किसलिए आये हो?"

"महानुभाव, मैं उज्जयिनी नगर का निवासी हूँ । मेरा नाम मूसिल है । आप से वीणा-वादन सीखने आया हूँ । आप का अनुग्रह हुआ, तो आप के बराबर का कलाकार कहलवाना चाहता हूँ ।" मूसिल ने जवाब दिया ।

बोधिसत्व ने मूसिल को वीणा-वादन सिखाने को मान लिया।

मूसिल प्रति दिन घर पर वीणा-वादन का अभ्यास करते और बोधिसत्व के साथ राज दरबार में हो आया करते थे।

कई साल बीत गये। एक दिन बोधिसत्व ने मूसिल से कहा– "बेटा, तुम्हारी विद्या पूरी हो गई है। मैं जो कुछ जानता हूँ, तुम्हें मैंने सारी विद्या सिखाई है। अब तुम अपने देश को लौट सकते हो।"

मगर मूसिल के मन में उज्जयिनी को लौटने का विचार न था। क्योंकि वहाँ पर उनकी विद्या का कोई आदर न था। वीणा वादन की कला में जब वे कच्चे थे तभी उज्जयिनी के निवासियों ने उनको महान कलाकार माना। किसी भी उपाय से सही, काशी राज्य के दरबारी कलाकार बनने पर ही उनकी ज्यादा प्रतिष्ठा होगी। इस वक्त उन्हें बोधिसत्व के बराबर की विद्वत्ता प्राप्त है। अलावा इसके बोधिसत्व वृद्ध हो चुके हैं! इसलिए काशी राज्य के दरबार में स्थान पाना चाहिए। यों विचार कर मूसिल ने बोधिसत्व से कहा–"मैं उज्जयिनी को लौटना नहीं चाहता, आप मानते हैं कि मुझे भी आप के बराबर पांडित्य प्राप्त है। इसलिए आप मेरे लिए भी राजदरबार में स्थान दिलाइये।"

दूसरे दिन बोधिसत्व ने राजा से यह बात कही। राजा ने सोच-समझ कर बताया– "मूसिल आप के यहाँ बहुत समय से शिष्य बन कर रहा, इसलिए उसे दरबारी विद्वान बना लेंगे; लेकिन आप को जो वेतन दिया जाता है, उसमें आधा ही वेतन उसे दिया जाएगा। यदि वह मेरे इस निर्णय से सहमत है तो इस पद को वह स्वीकार कर सकता है।"

बोधिसत्व के मुँह से ये बातें सुनने पर खुश होने के बदले मूसिल मन ही मन ईर्ष्या से भर उठा। वह सोचने लगा– "मैं बोधिसत्व से किस बात में कम हूँ? उनके वेतन के बराबर मुझे क्यों नहीं देते?"

मूसिल राजा के पास पहुँचा और बोला– "महाराज, सुना है कि आप मुझे आधे वेतन पर दरबारी विद्वान के पद पर नियुक्त कर रहे हैं। मैं अपने गुरुजी के बराबर का पांडित्य रखता हूँ। उन्हें जो वेतन दिया जाता है, उतना मुझे भी मिलना चाहिए।"

राजा क्रोध में आये और बोले–"मैं तुम को गुत्तिल के शिष्य के रूप में जानता हूँ; लेकिन उनके बराबर के वैणिक के रूप में नहीं; प्रत्यक्ष देखने पर ही मान सकता हूँ।"

"आप चाहें तो मेरी परीक्षा लीजिए।" मूसिल ने कहा।

"अच्छी बात है। मौक़ा देख मैं तुम दोनों के बीच प्रतियोगिता का प्रबंध करूँगा। यदि तुम्हारा वादन तुम्हारे गुरुजी के वादन के बराबर साबित हुआ तो मैं तुम्हें भी उनके बराबर का वेतन दूँगा। वरना तुम्हें दरबार में प्रवेश करने न दूँगा। तुम्हें मेरी ये शर्तें मंजूर हैं?" राजा ने पूछा। मूसिल ने उन शर्तों को मान लिया।

इसके बाद गुरु और शिष्य के बीच प्रतियोगिता का प्रबंध हुआ। एक दूसरे को हराने के ख्याल से अपनी कला प्रदर्शित करने लगे। इस बीच बोधिसत्व की वीणा का एक तार टूट गया, मगर वे शेष तारों पर वीणा बजाने लगे। इसे देख मूसिल ने अपनी वीणा का एक तार जान-बूझ कर तोड़ डाला। थोड़ी देर बाद बोधिसत्व की वीणा की तंत्रियों में से एक और टूट गई। मूसिल ने भी एक और तार तोड़ डाला। चंद मिनटों में बोधिसत्व की वीणा की सारी तंत्रियाँ टूट गईं। मूसिल ने अपनी वीणा के सारे तार तोड़ डाले। मगर बोधिसत्व टूटी तंत्रियों पर ही स्वरों का आलाप करने लगे। पर मूसिल ऐसा कर न पाया। दरबारियों ने बोधिसत्व की प्रतिभा देख तालियाँ बजाईं और मूसिल का मजाक़ उड़ाया।

मूसिल यह अपमान सह नहीं पाया। वह उसी वक़्त दरबार से बाहर चला गया। फिर उसी दिन उज्जयिनी के लिए रवाना हुआ।
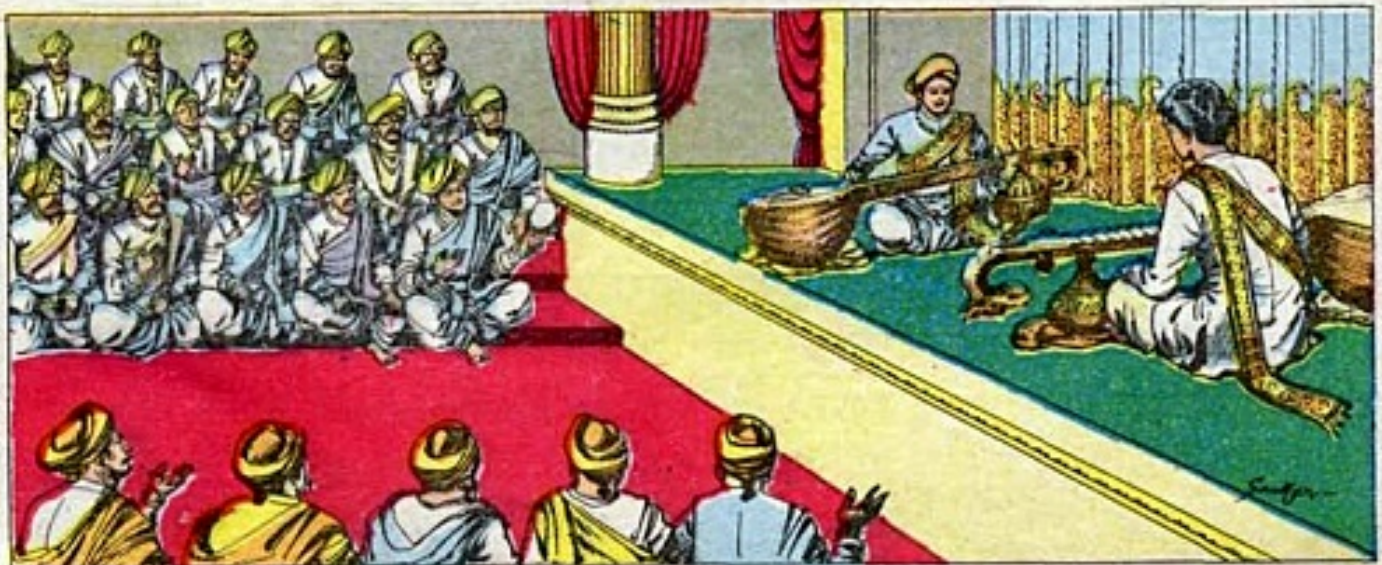
सुलताना रजिया

तुर्किस्तान की एक पहाड़ी में कुछ नौ जवान खेल रहे थे। उन में से एक लड़का बहुत ही छोटा था। उस वक्त सौदागरों का एक दल उधर से आ निकला। बाक़ी जवानों ने छोटे लड़के को सौदागरों के दल के एक सौदागार को गुलाम के रूप में बेच डाला।

थोड़े दिन बीत गये। उस बालक पर रहम खाकर एक आदमी ने उसे ख़रीद लिया। वह शख़्स कोई और न था, गोरी मुहम्मद का ख़ास गुलाम था। गोरी की मौत के बाद वह गुलाम दिल्ली की गद्दी पर बैठा। फिर वह कुतुबुद्दीन ऐबक के नाम से इतिहास में मशहूर हुआ।

इस तरह दो बार गुलाम के रूप में बिकनेवाले बालक का नाम इल्तमश था। लोग उसे गुलाम का गुलाम पुकारा करते थे। एक बार उसने अपने मालिक को हत्या से बचाया। इस वजह से ऐबक के दिल में इल्तमश के प्रति वात्सल्य पैदा हुआ। कुछ साल बाद इल्तमश ने ऐबक की बेटी से शादी की।

ऐबक के मरने पर सारे देश में अराजकता फैल गई। इल्तमश ने गद्दी पर क़ब्ज़ा कर लिया। तब उसका सामना करने वाले गजनी के शासक ताजुद्दीन के साथ कुछ अमीरों को भी हराया। इस तरह सारे विद्रोहियों को दबा कर इल्तमश ने अपने अधिकार को स्थिर बनाया।

ई. सन् १२३२ के क़रीब इल्तमश ने दिल्ली के कुतुब मीनार का निर्माण पूरा किया। दर्शकों को चकित करनेवाली यह एक गोपुर जैसी ऊंची इमारत है। कहा जाता है कि इस्लाम मत के धर्म गुरु ख्वाजा कुतुबुद्दीन के मखबर पर इसका निर्माण हुआ है।

इल्तमश ने अपनी मौत के निकट आया जानकर सब को अचरज में डालनेवाले ढंग से अपने बेटों के बदले अपनी बेटी रजिया को सुलताना एलान किया। क्योंकि उसकी नज़र में उसके बेटे नालायक़ थे। रजिया बड़ी ही अक़्लमंद और अनुशासन रखनेवाली थी।

पर इल्तमश का यह निर्णय उस जमाने की सामाजिक हालत के खिलाफ़ था। क्योंकि अमीर लोग और बाकी प्रमुख व्यक्ति एक औरत को अपनी मलिका के रूप में स्वीकार करने की हालत में न थे। इसलिए उसके बाप के मरते ही सबने मिलकर रजिया को गद्दी से उतार दिया।

उनकी नजर रजिया के सौतेले भाई रुक उद्दीन पर पड़ी। उन लोगों ने रुक उद्दीन को दिल्ली की गद्दी पर बिठाया। वह एक बेवकूफ़ और बातूनी था। सुलतान बनने के उत्साह में आकर उसने एक हाथी पर सवार हो दिल्ली की गलियों में जुलूस निकलते जनता पर मुठ्ठियाँ भर भर कर चांदी व सोने के सिक्के उछाल दिये।

रुक उद्दीन की मां षातुर्कान इल्तमश की बीबियों में से एक थी। वह बड़ी ही क्रूर थी। उसका बेटा विलासों में डूबा हुआ था, इसलिए मौक़ा पाकर उसने सारा अधिकार अपने हाथ में ले लिया। इल्तमश की बीबियों में से कुछ को मरवा डाला और बाकी को क़ैद में डलवा दिया।

राजवंश में शातुर्कान की एक सौत का बेटा बड़ा ही अक़लमंद और क़ाबिल था। उसकी आँखें फोड़वाकर शातुर्कान ने बाद को उसकी हत्या करवा डाली। इसके बाद उसने रजिया को मरवा डालने की योजना बनाई। यह बात जानते हुए भी रजिया की समझ में कुछ न आया कि क्या किया जाय।

शातुर्कान और रुक उद्दीन के अत्याचारों ने जनता में बड़ी हलचल मचा दी। उनका समर्थन करने वाले सरदार भी जनता के क्रोध से डर कर चुप रह गये। फिर क्या था, शातुर्कान क़ैद कर ली गई। उसका बेटा गद्दी से उतार दिया गया। बाद को वह बुरी तरह से मार डाला गया।

उस हालत में जनता को संतुष्ट कर सकनेवाले रजिया को छोड़ कोई दूसरा न था। जनता रजिया के बाप इल्तमश की वसीयत से भलीभांति परिचित थी। इसलिए जनता ने रजिया को गद्दी पर बैठने को कहा। बाकी सरदारों को भी रजिया का समर्थन करना पड़ा। इस प्रकार रजिया सुलतान रजिया के रूप में दिल्ली की शासिका बना गई।

सफलता की सीढ़ी

ताम्रपर्णि शहर एक बंदरगाह भी था। उसमें रामगुप्त नामक एक व्यापारी था। ईमानदारी के साथ व्यापार करते उसने लाखों रूपये कमाये। उसके मुरहरि और नरहरि नामक दो बेटे थे। दोनों बेटे जब जवान बन गये, तब रामगुप्त के मन में समुद्री व्यापार करने की इच्छा पैदा हुई। उस शहर के कुछ व्यापारी पूर्वी दिशा के टापुओं में जहाजों पर माल लदवा कर पहुँचे और काफी धन कमा कर लौट आये।

जहाजों पर समुदी व्यापार आसान काम नहीं था। रामगुप्त ने अपने बेटों में से एक को समुद्री व्यापार में लगाना चाहा। लेकिन नये प्रदेश देखने के ख्याल से दोनों बेटे समुद्री व्यापार करने में होड़ लगाने लगे। रामगुप्त की समझ में न आया कि इस समास्या को हल कैसे किया जाय।

एक दिन रामगुप्त ने अपने दोनों बेटों को बुलवा कर समझाया-"बेटे, समुद्री व्यापार पर जाने के लिए अभी काफी दिन बचे हैं, मैंने तुम्हें पहले ही बताया था कि जंगल के रास्ते में जो मंदिर है, उसके समीप में मैं एक सराय बनवाना चाहता हूँ। उस सराय के बनवाने का काम तुम दोनों में जो बड़ी सूझ-बूझ के साथ पूरा करेगा, उसी को मैं समुद्री व्यापार पर भेज दूंगा।"

चिट निकालने पर यह जिम्मेदारी मुरहरि पर आ पड़ी। मुरहरि सराय बनाने के लिए जंगल में पहुँचा। जल्द ही ईंट, चूना और मिस्त्री सबका इंतजाम हो गया। उस प्रदेश के झाड-झंखाड और पेड़ों को काटने तथा नदी से पानी लाने के लिए भी मजदूरों की जरूरत आ पड़ी। शहर से मजदूरों को बुला ले जाना खर्चीला काम था। इसलिए नजदीक की भील बस्ती से

दीप नारायण

सौ सिक्कों की तनख्वाह देनी होगी। क्या आप को मंजूर है?"

मुरहरि के मान लेने पर कुशाल भील बस्ती से मजदूरों को बुला ले आया। सराय बनाने का काम तेजी के साथ चलने लगा।

रामगुप्त एक दिन सराय के निर्माण का निरीक्षण करने पहुँचा। उस वक़्त कुशाल एक पेड़ की छाया में खड़े हो किसी से बात कर रहा था। रामगुप्त ने अपने बेटे के द्वारा जान लिया कि कुशाल को कितनी तनख्वाह मिलती है, तब समझाया–"पेड़ की छाया में बातचीत करते समय काटने वाले को इतनी ज्यादा तनख्वाह क्यों देते हो? मासिक दस सिक्के दे दो, इससे एक भी सिक्का ज्यादा नहीं।"

उस दिन शाम को अपने पिता के जाते ही मुरहरि ने कुशाल को बुला कर कहा– सुनो, आज से तुम्हें सिर्फ़ दस सिक्के वेतन मिलेगा। यह मेरे पिताजी का आदेश है।"

दूसरे दिन एक भी मजदूर काम पर न आया। मुरहरि ने खुद भील बस्ती में जाकर बुलाया, पर सबने काम पर आने से साफ़ इनकार किया। सराय बनानेवाले मिस्त्रियों ने बताया कि बरसात का मौसम आने वाला है, इसलिए इस बीच सराय का काम पूरा न हो जाय, तो काफी नुक़सान उठाना पड़ेगा। इस पर मुरहरि फिर

मजदूरों को बुला लाने की मुरहरि ने बड़ी कोशिश की, लेकिन भीलों ने काम पर आने से मना किया।

मुरहरि निराश होकर अपने खेमे में लौट आया। उसे किसी चिंता में डूबे देख कुशाल नामक एक भील युवक नरहरि के पास पहुँचा और बोला–"सरकार, आप को क्या मजदूरों की जरूरत है? मैं भीलों की बस्ती से मजदूरों को बुलवा ला सकता हूँ।"

मुरहरि ने अचरज में आकर पूछा–"क्या तुम एक सौ मजदूरों को बुला ला सकते हो?" कुशाल ने 'हां' भर दिया और पूछा–"सरकार, मुझे हर महीने एक

भील बस्ती में गया, पुराने हिसाब से कुशाल को तनख्वाह देने की बात कही। फिर क्या था, दूसरे दिन सारे मजदूर काम पर आ गये।

इस घटना के दो सप्ताह बाद रामगुप्त फिर सराय के निर्माण का निरीक्षण करने आ पहुँचा। मुरहरि ने सारा समाचार अपने पिता को सुनाया। रामगुप्त ने खीझ कर कहा—"इस तरह तुम मजदूरी बढ़ाते जाओगे तो सराय बनाने का खर्च दुगुना हो जाएगा। ऐसी हालत में तुम्हारी क़ाबिलियत क्या रही ?"

इसके बाद मुरहरि ने एक बार और कुशाल को बुलवा कर साफ़ कह दिया कि उसे दस सिक्के से ज्यादा वेतन दिया नहीं जा सकता। दूसरे दिन से मजदूरों ने काम पर आना बंद किया। मिस्त्रियों ने तकाजा देना शुरू किया। मुरहरि की हालत अब ओखली में सर देने के बराबर हो गई। उसने घर लौट कर अपने पिता को बताया कि सराय बनाने का काम उससे बनेगा नहीं। इस पर रामगुप्त ने अपने छोटे पुत्र नरहरि को सराय बनाने का काम सौंप दिया।

नरहरि ने कुशाल को बुलवा कर स्पष्ट कह दिया—"तुम्हें हर महीने दस सिक्के से ज्यादा वेतन नहीं दूंगा। यह मेरे पिताजी का आदेश है। अब रही, तुम्हारे द्वारा मजदूरों पर निगरानी रखने की बात। इस काम के वास्ते मैं तुम्हें रोज तीन सिक्के

अलग से दूंगा। तुम्हें अगर मेरी ये शर्तें मंजूर हैं तो सारे मजदूरों को बुला ले आओ, वरना मैं कल इस वक़्त तक शहर से मजदूरों को बुला लाऊँगा।"

कुशाल दो-चार मिनट तक अपने मन में हिसाब लगाता रहा, फिर मुस्कुरा कर बोला–"अच्छी बात है। ऐसा ही कीजिए। आपकी जो मेहर्बानी।"

जब सराय का काम लगभग पूरा होने को था, तब एक दिन रामगुप्त सराय के काम का निरीक्षण करने आया। उसे मालूम हुआ कि छोटा पुत्र नरहरि कुशाल को मासिक दस सिक्के ही वेतन देता है, तब खुश होकर बोला–"बेटा, तुम्हारा बड़ा भाई जो काम साध नहीं पाया, तुमने उसे साध लिया। मैं यह जानना नहीं चाहता कि तुमने इसे कैसे साध लिया? जिन देशों की भाषा हम लोग नहीं जानते, उन देशों के साथ व्यापार करके सफलता प्राप्त करना मामूली बात नहीं है। पर तुम कार्यसाधक हो। इसलिए मैंने तुमको समुद्री व्यापार पर भेजने का निश्चय कर लिया है!"

यह खबर मिलते ही मुरहरि अचरज में आ गया और अपने छोटे भाई नरहरि के पास जाकर पूछा–"भैया, तुमने कुशाल को मासिक दस सिक्के वेतन पर कैसे मनवा लिया है?"

"भाई साहब, कुछ संदर्भों में हमें ऐसा व्यवहार करना पड़ता है जिससे सांप भी मरे, पर लाठी न टूटे! मैं ने कुशाल को मासिक दस सिक्के वेतन देते हुए रोज तीन सिक्के भत्ते का इंतजाम किया। पिताजी ने मेरे जेब खर्च के वास्ते जो धन दिया था, उसमें से तीन सिक्के बचा कर मैं कुशाल को चुकाता रहा। इस तरह आसानी से यह समस्या हल हो गई।" नरहरि ने समझाया।

यह छोटी सी युक्ति भी मेरे दिमाग में न सूझी, ऐसी हालत में मैं समुद्री व्यापार क्या कर सकता हूँ? तुम्हीं इस काम के लायक़ हो।" यों मुरहरि ने अपने छोटे भाई की तारीफ़ की।

सन्यासी से गृहस्थ भला

श्रीनिवास की शादी गांव के मुखिये की बेटी कमला से पक्की हो गई। अपने माता-पिता के जोर डालने पर ही उसने कमला के साथ शादी करने को मान लिया। पर उसके रिश्तेदार और दोस्तों ने इधर-उधर यह प्रचार करना शुरू किया—"कमला तो बदसूरत है तिसपर हठीली और झगड़ालू। ऐसी लड़की के साथ अगर श्रीनिवास शादी करने के लिए तैयार हो गया है तो इसका मतलब है कि वह सिर्फ़ जायदाद के पीछे पागल है।"

श्रीनिवास पहले से ही कमला के साथ शादी करने को हिचकिचा रहा था, अब लोगों के ठाने उसके दिल में शूल बनकर चुभने लगे। वह चुपचाप आधी रात के वक्त घर छोड़ कर चल पड़ा दस कोस की दूरीपर स्थित सदानंद स्वामी के आश्रम में जाकर उनका शिष्य बन गया।

छे महीने भी पूरे न हो पाये श्रीनिवास आश्रम के कड़े नियम और अनुशासन से घबरा कर घर लौट आया। अपने माँ-बाप से बोला—"मैं कमला के साथ शादी करना चाहता हूं, जल्दी मुहूर्त निश्चित कीजिए।" इसके बाद एक हफ़्ते के अंदर उनकी शादी हो गई।

श्रीनिवास के दोस्तों ने उसका मजाक उड़ाते हुए कहा—" गृहस्थ जीवन से तंग आकर सन्यासी बनने वाले कई लोगों को हमने देखा है। मगर उसके विपरीत आचरण करने वालों को हमने कहीं नही देखा है।" श्रीनिवास ने हँस कर जवाब दिया—"इसमें अचरज करने की क्या बात है? सन्यासियों के बीच छे महीने बिताने के बाद मुझे लगा कि कमला के साथ गृहस्थ जीवन बिताना स्वर्ग तुल्य ही होगा।"
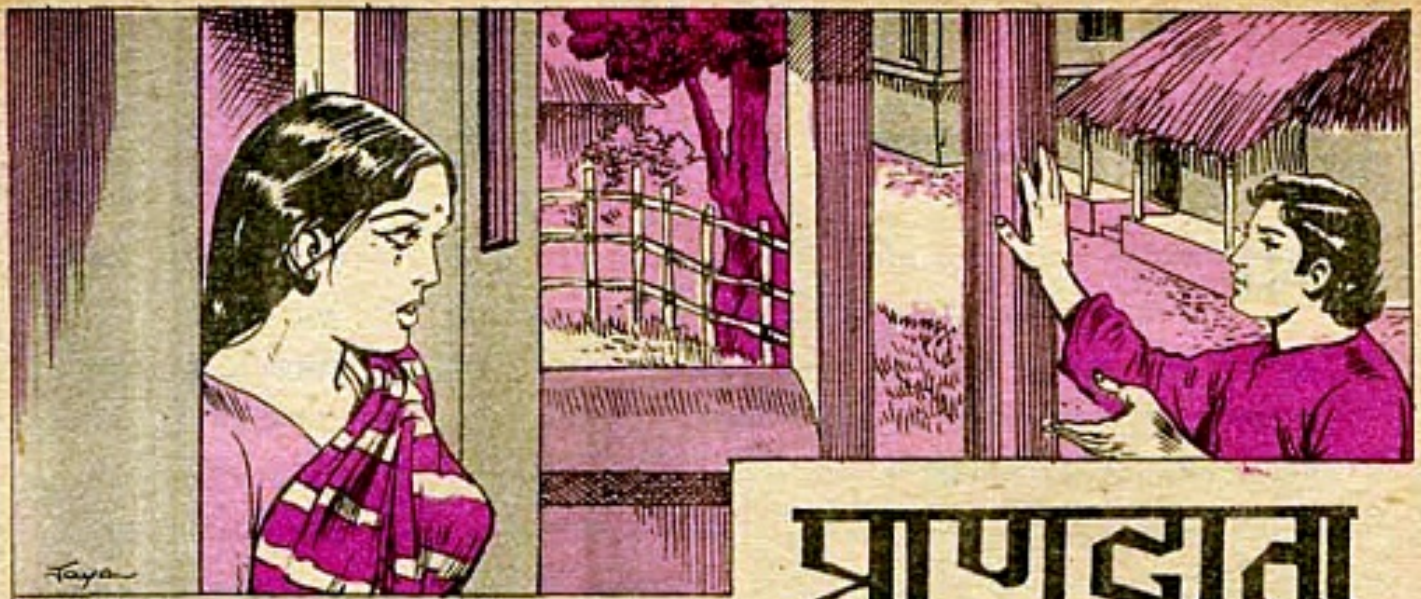
प्राणदाता

दुपहर के क़रीब कनकदास जो घर से चल पड़ा, उसके हमीरपुर पहुँचते-पहुँचते आधी रात हो गई। भयंकर सर्दी पड़ रही थी। वह सोचने लगा कि रात को कहाँ पर आश्रय ले। सारा गाँव सुनसान था। गली से होकर थोड़ी दूर आगे बढ़ा, तब उसने देखा कि एक खपरैलवाले मकान में दिया जल रहा है।

कनकदास उस मकान के सामने पहुँचा। ड्योढ़ी पर एक युवती खड़ी थी। वह अचरज में आया, समीप जाकर बोला– "मैं एक मुसाफ़िर हूँ। क्या मैं आज रात को आपके बरामदे में आराम कर सकता हूँ?"

युवती ने झट कोई जवाब नहीं दिया, उल्टे कनकदास की आँखों में परखकर देखा। कनकदास ने भांप लिया कि युवती के दिल में कोई घबराहट है।

युवती ने मौन भंग करते हुए कहा– "क्या आप मेरी छोटी-सी मदद कर सकते हैं?"

यह सुनकर कनकदास विस्मय में आ गया, तभी वह युवती अपने दुख पर जब्त करते हुए बोली–"मेरे बाबूजी आज सवेरे लकड़ी काटने जंगल में गये, अभी तक लौटकर नहीं आये। मुझे तो डर लगता है। उनकी खोज करने केलिए आप मेरे साथ चल सकते हैं?"

कनकदास को उस युवती की हालत पर दया आ गई। वह बड़ी दूर से पैदल चला आया था, इसलिए थक गया था। फिर भी दृढ़ स्वर में बोला–"जरूर चलूंगा, चलिये।"

कनकदास की स्वीकृति पाकर वह युवती बड़ी खुश हुई; उसने झट किवाड़ पर ताला लगाया और लालटेन लेकर चल

सुभाष गोयल

पड़ी। रास्ते में उसने कनकदास को अपना सारा हाल सुनाया।

युवती का नाम कल्याणी है। उसके पिता को छोड़ उसका अपना कहने वाला कोई नहीं है। उसका बाप पहले जंगल से लकड़ी काट लाता और हाट में बेच कर दोनों का गुजारा करता था। उम्र बढ़ने के साथ गसकी ताक़त ने जवाब दिया। इसलिए वह जंगल से रीठा और इमली चुन लाकर बाजार में बेचने लगा। वह रोज सवेरे उठकर जंगल में चला जाता और शाम तक लौट आता। आज आधी रात के बीतने पर भी घर न लौटा, इसलिए वह घबराये हुए थी।

"मुसीबत के वक़्त साथ देने वाले पड़ोसी क़िस्मतवरों को ही प्राप्त हो, जाते हैं। मैंने अपने सभी पड़ोसियों के घर जाकर उनसे गिड़गिड़ा कर पूछा कि मेरे पिताजी की खोज करने में कृपया साथ दे, मगर कोई भी इस जाड़े में मेरे साथ जंगल में जाने को तैयार नहीं हुए।" कल्याणी ने कहा। इसके पहले कल्याणी चार पाँच दफ़े अपने बाप के साथ जंगल में गई थी। इसलिए उसे मालूम था कि वह कहाँ-कहाँ चक्कर काटता है। उस जगह पहुँचते ही कल्याणी ने ऊँची आवाज़ में पुकारना शुरू किया– "बाबूजी, बाबूजी।"

कनकदास को पता चला कि कल्याणी के पिता का नाम गोपालदास है। उसने वही नाम लेकर कई बार पुकारा। उस पुकार को सुन कर पेड़ों पर बैठे पक्षियों ने कलरव मचाया, पर गोपालदास की कोई आवाज़ सुनाई नहीं दी। वे गोपालदास को पुकारते देर तक घूमते रहें और सवेरे होते-होते घर लौट आये।

कल्याणी अपने दुख को रोक न पाई। वह रो पड़ी। कनकदास उसे हिम्मत बंधाते हुए बोला–"तुम्हारे पिता किसी जरूरी काम से उधर से कहीं निकल गये होंगें। हम शाम तक उनका इंतज़ार करेंगे।"

शाम के वक़्त गली में से पचास साल के एक आदमी ने कल्याणी का नाम लेकर पुकारा। वह कोई और न था, जंगल में लकड़ी काटकर ज़िंदगी बसर करने वाला सोमनाथ था।

सोमनाथ रीठों से भरी थैली कल्याणी के हाथ थमाते हुए गद्‌गद् स्वर में बोला- "यह थैली मुझे जंगल में पड़ी मिली।- इसके थोड़ी दूर पर ये जूते मिले। ये तुम्हारे पिता के ही हैं न? मेरे मन में उनके जिंदा रहने की थोड़ी आशा है। फिर भी हम लोग जानते हैं, कुछ महीने पहले इसी जगह पर सत्यनारायण को बाघ उठा ले गया था।"

ये बातें सुनते ही कल्याणी बेहोश होकर नीचे गिर पड़ी। कनकदास उसके चेहरे पर पानी छिड़क कर उसकी परिचर्या करते बैठा रहा। आधी रात के क़रीब कनकदास की आँखें भारी मालूम हुईं। वह ऊँघ ही रहा था, तभी पिछवाड़े में कोई आहट पाकर वह जाग उठा; फिर देखता क्या है, खाट पर कल्याणी नहीं है। कनकदास पिछवाड़े की ओर दौड़ पड़ा। कल्याणी बाल नोचते हुए कुएँ की ओर जा रही है। कनकदास ने लपक कर उसका हाथ कस लिया और डांट कर बोला-"यह तुम क्या कर रही हो? चलो, अंदर।"

"मेरे ज़िंदा रहने से फ़ायदा ही क्या है? इस दुनिया में मेरे अपना कहने वाला कोई नहीं है।" यों कहते कल्याणी दहाड़ मार कर रो पड़ी।

कनकदास ने उसे सांत्वना देते हुए समझाया-"तुम्हें सहारा देने के लिए मैं हूँ। मैं अपने माँ-बाप को समझा कर तुम्हारे साथ शादी करूँगा।"

इस पर कल्याणी घर के अंदर चली गई और खाट पर लेट गई। सबेरा होते-होते एक बैल गाड़ी आकर उस मकान के सामने रुकी। कल्याणी ने जाकर दर्वाजा खोला और गाड़ी से उतरने वाले अपने पिता को देख खुशी के मारे फूली न समाई।

सोमनाथ बहुत कमजोर दिखाई दे रहा था। उसे एक युवक हाथ का सहारा देकर भीतर ले आया।

अपने अंगोछे से गोपालदास ने कल्याणी की आँखें पोंछते हुए सारी कहानी सुनाई।

गोपालदास जंगल में रीठे को चुनते एक पेड़ के पास पहुँचा। उसमें पके रीठों को देख टहनियों को हिलाने के ख्याल से पेड़ के तने के पास गया, थोड़ी असावधानी के कारण बाँबी पर क़दम रखा। उसी वक़्त फुत्कारते हुए एक नाग बाँबी से बाहर निकला और उसके पैर पर डंस कर सरकते हुए भाग गया।

गोपालदास की आँखों के सामने अंधेरा छा गया और वह वहीं पर लुढ़क पड़ा।

"इसके बाद की घटना तो वे नहीं जानते, मैं बताता हूँ।" इन शब्दों के साथ गोपालदास के साथ आये हुए युवक ने कहना शुरू किया–'मेरा नाम राजाराम है। बचपन में ही मेरे माता-पिता गुजर गये। मैं एक अनाथ हूँ। मेरे गाँव में सब कोई मुझे झिड़क देते थे। परसों मेरे गाँव में एक उत्सव था। उस वक़्त पशुओं की बलि और भक्तों की चिल्लाहटों से घबरा कर मैं जंगल में भाग आया। जंगल में एक पेड़ के नीचे तुम्हारे पिता अचेत पड़े थे। इनके मुँह से झाग निकल रहा था। मैंने भांप लिया कि इनको सांप ने डंस लिया है। उसी वक़्त मैं इनको अपने कंधे पर लादे समीप के गाँव के एक वैद्य के पास ले

गया। वैद्य ने इलाज करके इनको बचाया है।"

"आप का उपकार मैं ज़िंदगी भर भूल नहीं सकती। आपने मेरे बाबूजी की जान बचाई और ये जो हैं–मेरे प्राण दाता हैं।" यों कहते कल्याणी ने कनकदास का उन दोनों को परिचय कराते हुए सारा वृत्तांत सुनाया।

बाप-बेटी को बचाने वाले राजाराम और कनकदास उसी क्षण गहरे दोस्त बन गये। उस दिन शाम को जब वे दोनों टहलने गये, तब गोपालदास ने कल्याणी से कहा–"आज से राजाराम अनाथ नहीं, यह भी हमारे साथ रहेगा। मैं तुम दोनों की शादी करने जा रहा हूँ।"

कल्याणी ने चौंक कर कहा–"बाबूजी, कनकदास मेरे साथ शादी करना चाहता है।"

"राजाराम ने मेरे प्राण बचाये हैं। मैंने उसे वचन दिया है कि उसके साथ तुम्हारी शादी करूँगा। उसको समझा-बुझाकर मैं अपने साथ लाया हूँ।" गोपालदास ने कहा।

"तब तो कनकदास मेरे प्राण दाता हैं न? कल्याणी बोली।

गोपालदास थोड़ी देर सोच कर बोला–"बेटी, मैं तुम्हारे निर्णय पर छोड़ देता हूँ; तुम इन दोनों में से किसी के भी साथ शादी करो, मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

कल्याणी की समझ में न आया कि उलझन की इस गुत्थी को कैसे सुलझाया जाय। वह हर शुक्रवार को देवी के मंदिर में जाया करती है। पर उस दिन शुक्रवार न था। फिर भी उसका पिता सकुशल घर लौट आया था, इस कारण उसने मंदिर में जाने का संकल्प किया।

मंदिर के पुजारी का कल्याणी के प्रति बड़ा ही वात्सल्य भाव था।

कल्याणी देवी के दर्शन के बाद पुजारी के पास पहुँची और उसके सामने अपनी समस्या रखी।

पुजारी ने समझाया– बेटी, यह समस्या तुम्हारे भावी जीवन से संबंधित एक भारी

समस्या है। इसलिए तुम खुद एक निर्णय पर पहुँच जाओ, यही उत्तम है।"

"निर्णय तो मैं करूँगी; लेकिन आप को यह बताना होगा कि मेरा निर्णय सही है या नहीं। राजाराम मेरे बाबूजी के प्राण दाता हैं। कनकदास मेरे प्राण दाता हैं। इन दोनों में से किसी के साथ भी शादी करने के लिए मैं तैयार हूँ। पर गंभीरता के साथ सोच-समझने के बाद मैंने राजाराम के साथ शादी करने का निर्णाय कर लिया है।" कल्याणी ने कहा।

' क्या तुम्हारी राय मे तुम्हारी प्राणों की अपेक्षा तुम्हारे पिता के प्राण कहीं ज्यादा क़ीमती हैं।" पुजारी ने पूछा।

"मैं यहाँ पर प्राणों की क़ीमत आंक नहीं रही हूँ। इन दोनों के प्रति हम ज़िंदगी भर कृतज्ञ रहेंगे। जब मैंने सोचा कि मेरे बाबूजी शायद जीवित नहीं हैं, तब मैंने बड़ी मानसिक पीड़ा का अनुभव किया। इसलिए बचपन से किसी तरह का वात्सल्य पाये बिना जीने वाले राजाराम की पीड़ा को मैं समझ पाई। साथ ही उससे मिन्नत करके मेरे बाबूजी उसे अपने साथ ले आये हैं कि वह मेरे साथ शादी करे। पर कनकदास की बात अलग है। विपदा में फंसे मुझे देख उनका दिल पसीज उठा और वे मेरे साथ शादी करने को तैयार हो गये। मगर मैंने उनके साथ शादी करने का कोई वचन नहीं दिया। इसलिए राजाराम के साथ ही मेरा विवाह करना ज्यादा न्याय संगत होगा।" कल्याणी ने कहा।

पुजारी सर हिला कर मुस्कुराते मौन रह गया। कल्याणी घर लौट कर अपना निर्णय अपने बाप को सुना रही थी, तभी सैर से कनकदास और राजाराम लौट आये। सारी बातें सुनकर कनकदास ने मंदहास करते हुए कहा–"कल्याणी, तुम्हारा निर्णय सही है। राजाराम जैसे क़िस्मतवर लोग बहुत कम होते हैं।"

गोपालदास और राजाराम को कल्याणी के निर्णय की अपेक्षा कनकदास की बातों पर बड़ी खुशी हुई।

सूझ-बूझ

किशन के घर की फफूंदी साफ़ करने केलिए एक लड़का सीढ़ी पर चढ़ा और फिसल कर नीचे गिर कर पैर तोड़ डाला। तब उस सीढ़ी को कंधे पर लिये लंगड़ाते मुखिये के पास जाकर शिकायत की–" महाशय, किशन साहब ने ऐसी ख़राब सीढ़ी दी जिस पर चढ़ते हुए फिसल कर मैंने अपना पैर तुड़वा लिया है। कृपया आप इसका इलाज का खर्चा हर्जाना के रूप में मुझे दिलवा दीजिए।

मुखिये ने किशन को बुलवा कर लड़के की शिकायत के बारे में तलब किया; पर किशन जरा भी विचलित हुए बिना बोला–" यह लड़का अपनी लापरवाही से गिर गया है; इसमें मेरा क्या दोष है? मेरी सीढ़ी तो बड़ी मजबूत है।" यों कहते उसने समीप के एक पेड़ से सटा कर सीढ़ी खड़ी कर दी और जल्दी जल्दी उस पर चढ़ गया। किशन स्थूल काय था, इसलिए फट से सीढ़ी टूट गई।

मुखिये ने गुस्से में आकर पूछा–" अब इसका क्या जवाब देते हो?"

" मुझ जैसे मोटा-ताजा आदमी के चढ़ने पर यह सीढ़ी टूट गई है। मगर इस लडके के चढ़ने पर नहीं टूटी। ऐसी हालत हमें यह पोलवाली सीढ़ी कैसे हो सकती है? गलती तो लड़के की है।" किशन ने जवाब दिया।

मुखिये ने सोच-समझ कर अपना फैसला सुनाया कि हर्जाना देने की जरूरत नहीं है, तब लड़के को डांट कर भेजा।

विघ्नेश्वर की प्रतिमा के भीतर की देवता-मूर्तियों के संगीत पर तन्मय हो अगस्त्य महर्षि ने कहा–" वातापि गणपति ! आपने अपनी अद्भुत प्रतिमा को स्वयं गढ़ लिया है । ऐसी अपूर्व मूर्ति को गढना किस केलिए संभव है?"

इस पर प्रतिमा के भीतर से विघ्नेश्वर के ये शब्द सुनाई दिये–" अगस्त्य महर्षि, यह प्रतिमा मैं ने अपने लिए नहीं गढ़ी है । तुम्हारी संतुष्टि केलिए तुम्हारी कामना की पूर्ति की । इसलिए यह विशाल मूर्ति थोड़े समय के बाद अदृश्य हो जाएगी । द्वापर युग में जब युधिष्ठर अश्वमेध याग करेंगे, उस वक़्त इसी स्थान पर एक और विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठित की जाएगी ।"

यों धौम्य अर्जुन को सुनाकर बोले–" हे अर्जुन, उसी महान प्रतिमा को हम देख रहे हैं !"

अर्जुन ने उस विशाल प्रतिमा की कई बार परिक्रमा की, तब भक्ति एवं श्रद्धा के साथ उस प्रतिमा को परखकर देखा । वह विग्रह स्वयं विघनेश्वर ही थे । विघ्नेश्वर के साथ त्रिमूर्ति, जगदांबा, लक्ष्मी, पार्वती, सरस्वती, नव ग्रह, इत्यादि अनेक देवता-प्रतिमाएँ मनोहर मूर्तियों के रूप में गढी गई थीं । विघ्नेश्वर के दो चरणों के बीच विघ्न बंदी बनाया गया था । मूषिक राजा की पूँछ मूर्ति के चारों तरफ लपेटी गई थी । ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उस अपूर्व प्रतिमा का अवलोकन करने के लिए

सहस्त्र नेत्र भी पर्याप्त नहीं हो सकते। दिल भर कर उस प्रतिमा को देखने के बाद अर्जुन धौम्य से बोले–"आचार्यजी, इस अद्‌भुत प्रतिमा के चारों तरफ़ व्याप्त वातापि नगर एक जमाने में उच्च दशा में था, आज इस नगर की यह हालत क्यों है? मेरे मन में वातापि नगर का वृत्तांत सुनने की बड़ी जिज्ञासा पैदा हो रही है। कृपया उसकी गाथा सुनाइये।"

धौम्य आगे की कहानी सुनाने लगे–"अगत्स्य महर्षि ने अपनी पत्नी लोपामुदा के आदेनुसार सारा धन वहाँ के लोगों में बांट दिया। इसके बाद उन्हें समझाया कि वे लोग शासन की जिम्मेदारियों और नागरिक कर्तव्यों का अच्छी तरह से पालन करते हुए सुखमय जीवन बितावे। तब वे खाली हाथ लोपामुद्रा के साथ अपने आश्रम को चले गये।

विघ्नेश्वर की प्रतिमा को ही पजातंत्र का मुकुट मान कर उसकी आराधना करते हुए वातापि नगर की प्रजा चिर काल तक सुखमय जीवन बिताती रही। कई पीढ़ियाँ गुजर गईं, फिर भी वातापि नगर एक आदर्श प्रजा तंत्र राज्य के रूप में सर्वत्र लोकप्रिय हो गया।

अगत्स्य के डर से भाग कर इल्वल विन्ध्याचल के जंगलों में जाकर छिप गया और वह अज्ञात जीवन बिता रहा था। उसने थोड़े दिन बाद सुना कि वातापि नगर सब प्रकार से उन्नत दशा में है और अगत्स्य महर्षि उस वक़्त उस नगर में निवास नहीं कर रहे हैं; तब साम, दाम, भेद व दण्डोपायों के द्वारा अपनी इच्छा की पूर्ति करने के ख्याल से जनता की सेवा को अपने जीवन का आदर्श बताते हुए इल्वल छद्मवेष में वातापि नगर की जनता के बीच पहुँचा। उस समय नगर की हालत भी उसके अनुकूल थी।

धीरे धीरे समय के प्रभाव से अगत्स्य महर्षि की गैर हजिरी में वातापि नगर की जनता में स्वार्थ बढ़ता गया। अमीरी-

गरीबी फिर पनपने लगी। जनता के बीच भेदभाव और मन-मुटाव सर उठाने लगे। होशियार लोग भोले लोगों को धोखा-दगा देने लगे।

नगर की ऐसी पतनावस्था में इल्वल जनता के एक नेता के रूप में सामने आया। उसने अपने जादू-तंत्रों और मायावी प्रभावों के जरिये एक महा पुरुष के रूप में जनता को अपनी ओर आकृष्ट किया। जनता उस पर विश्वास करने लगी।

इल्वल ने यह बात समझ ली कि वातापि नगर के बीच स्थापित विघ्नेश्वर की प्रतिमा के प्रति जनता के मन में जब तक श्रद्धा और भक्ति बनी रहेगी, तब तक वहाँ की जनता अगत्स्य और अगत्स्य के द्वारा प्रचारित नैतिक सूत्रों को भूल नहीं पायेगी। इसलिए उसने जनता के मन में तंत्र-विद्याओं, दुराचारों और मद्यपान के प्रति अभिरुचि पैदा कर दी। अगत्स्य ने प्रजातंत्र के नैतिक सूत्रों के जो शिलालेख यत्र-तत्र पहले गडवाये थे, उन्हें इल्वल ने निकलवा दिया और उनकी जगह अपने सिद्धांतों के नये सूत्रों का प्रचार किया। एक दूसरे को लूटने में जो खुशी होती है, उस का नशा लोगों में फैला दिया। साथ ही इन सिद्धांतों का भी प्रचार किया कि आँख-नाक बंद किये बैठे रहना मानव का लक्षण नहीं है, नये-नये सुखों की खोज करने के लिए उन्हें जीना जरूरी है। इस बीच प्रच्छन्न वेष धारण कर बहुत से राक्षस इल्वल की मदद के लिए आ पहुँचे।

जनता के सेवक के रूप में प्रवेश कर के, जनता के नेता बन कर धीरे धीरे इल्वल महा नेता कहलाया। जनता जब पूर्ण रूप से उसके अधिकार में आ गई, तब वह एक नियंता बनकर जनता को कुचलने लगा। सारे देश में हलचल मच गई और बहुत से लोग नगर छोड़ कर चले गये।

इल्वल ने नगर के बीच स्थित विघ्नेश्वर की प्रतिमा को नष्ट करने की सब तरह

से कोशिश की। उसने चारों तरफ़ तोपों को लगा कर उसका निशाना बनाया। मूर्ति के नीचे विस्फोटक पदार्थ रखवाये। अब सिर्फ़ उसमें आग लगाने की देरी थी, ऐसी हालत में एक अनोखी घटना हुई। बिना आग लगायें ही बारूद में अचानक विस्फोट हुआ। तोप अपने आप पीछे की ओर मुड़ कर आग के गोलों की वर्षा करने लगे। उस में बहुत सारे दुष्ट लोग मारे गये। अनेक लोग विकलांग बने, उनमें इल्वल भी एक था। इल्वल एक पैर और एक हाथ खो बैठा। खून से लथपत हो जमीन पर लोटने वाले इल्वल को मूर्ति के भीतर से ये शब्द सुनाई पड़े—

"अरे इल्वल, अंग विकलता और बुढापे से सड़ते हुए तुम चिरकाल तक जिओ। यही तुम्हारे लिए सही सजा है।" यों विघनेश्वर ने उसे शाप दिया।

"वातापि नगर अपने पूर्व वैभव को खोकर उजड़ गया है, अब इसमें नाम के वास्ते थोड़े से लोग बसते हैं।" धौम्य ने अपनी बातें समाप्त कीं।

अर्जुन ने पीछे मुड़ कर देखा और अवाक् रह गये। उन्हें विघ्नेश्वर की प्रतिमा दिखाई नहीं दी। अर्जुन को विस्मित देख धौम्य बोले—"अर्जुन, अचरज में न आओ। तुमने इसके पूर्व ही सुना है कि विघ्नेश्वर की यह अद्भुत प्रतिमा अदृश्य हो जाएगी।" धौम्य यों सुना ही रहे थे कि एक वृद्ध समीप की कंटीली झाड़ियों से विकृत रूप में एक लूले हाथ और एक लंगड़े पैर के साथ अपने शरीर को घसीटते आया, जोर से चीख़ कर मूर्ति की ओर हाथ जोड़ कर छटपटाते दम तोड़ बैठा।

उस दृश्य को देख अर्जुन ने पूछा— "गुरुदेव, यही है न इलवल ?"

"हां, दुष्टों का अंत हमेशा इसी तरह होता है।" धौम्य ने जवाब दिया।

इसके बाद दूतों के द्वारा अर्जुन ने युधिष्ठिर के पास संदेशा भेजा कि वे

तुरंत वातापि नगर में चले आये। हस्तिनापुर से युधिष्ठिर भीम, नकुल और सहदेव के साथ वातापि नगर में पहुँचे।

उस दिन रात को युधिष्ठिर उस स्थान पर बैठ कर, ज़हाँ से विघ्नेश्वर की मूर्ति अंतर्धान हो गई थी, विघ्नेश्वर का ध्यान करने लगे–"मेरे छोटे भाई ने आपकी महान प्रतिमा के दर्शन किये हैं। भगवन, क्या मुझे यह अवसर प्रदान नहीं करेंगे? आपकी महान प्रतिमा को कौन गढ़ेगा? यथा शीघ्र आपकी प्रतिमा को स्थापित करने का अवसर मुझे प्रदान कीजिए।"

उस वक़्त युधिष्ठिर के कानों में ये शब्द गूंजने लगे–"युधिष्ठिर, देव शिल्पी विश्वकर्म और दानव शिल्पी मय आकर प्रतिमा गढ़ेंगे। मूर्ति की प्रतिष्ठा के बाद यज्ञ का अश्व निकलेगा। आप का अश्वमेध याग निर्विघ्न पूरा होगा। आप वातापि नगर का पुनरुद्धार कीजिए। आप की संतति के चंद्रवंशी लोग चिरकाल तक इस नगर पर शासन करेंगे।"

युधिष्ठिर ने आँखें खोल कर देखा, सामने विघ्नेश्वर की भारी मूर्ति द्युतिमान होकर दिखाई दी, पर तुरंत अंतर्धान हो गई।

दूसरे ही दिन एक गोरे और एक काले व्यक्ति समीप की झाड़ियों में स्थित भारी

शिलाओं का परिशीलन करते दिखाई दिये। युधिष्ठिर ने समझ लिया कि वे दोनों कौन हैं? उन्हें प्रणाम करके उनका आदर किया।

उन शिलाओं को उखाड़ने के लिए जब खुदाई शुरू की गई, तब वहाँ पर बहुत बड़ा खजाना हाथ लगा। इल्वल ने वह सारा सोना छिपा रखा था। उस जगह को छोड़ न जाने की हालत में वह सड़-सड़ कर वहीं पर मर गया था। युधिष्ठिर ने उस धन का उपयोग वातापि नगर के विकास में लगा दिया।

दो महान शिल्पियों के द्वारा विघ्नेश्वर की मूर्ति तथा मंदिर उस स्थान पर अवतरित

हुए, जहाँ पर विघ्नेश्वर की मूर्ति अदृश्य हो गई थी। साथ ही मण्डप भी तैयार किया गया। वहाँ पर विश्वकर्म और मय की शिल्प शैलियों के अद्भुत मिश्रण द्वारा एक महान एवं नवीन शिल्प-संप्रदाय का शुभारंभ हुआ। भरत वंश के द्वारा स्थापित यह शिल्प भारतीय शिल्प के रूप में विख्यात हुआ। शिल्प की समाप्ति के बाद दोनों शिल्पी अदृश्य हो गये।

मंदिर में युधिष्ठिर के द्वारा विघ्नेश्वर की प्रतिमा की स्थापना होते ही यज्ञ का घोड़ा चल पड़ा। अर्जुन और भीम सेना को लेकर उसके पीछे चल पड़े। युधिष्ठिर अगत्स्य के द्वारा चलाये गये प्रजातंत्र शासन को वातापि नगर में स्थापित कर नकुल और सहदेव के साथ हस्तिनापुर को लौट गये।

थोड़े समय तक प्रजातंत्र के पर्यायवाची के रूप में वह प्रदेश अगत्स्य राज्य तथा वह नगर अगत्स्य नगर नाम से पुकारे गये। मगर कालांतर में वातापि नगर नाम से ही वह स्थिर हो गया।

अर्जुन दिग्विजय करके घोड़े के साथ हस्तिनापुर को लौट आये। अश्वमेध याग संपन्न हुआ। युधिष्ठिर ने यज्ञ के अंशों को विशेष रूप से विश्वकर्म तथा मय को समर्पित किया। शिल्पियों और शिल्प को भी इस प्रकार आदर दिया।

युधिष्ठिर के बाद परीक्षित तथा परीक्षित के बाद जनमेजय ने राज्य किया। जनमेजय की संतान ने वातापि नगर पर शासन किया।

वातापि नगर पर शासन करने वाले चंद्रवंशी राआओं में शतृंजय बड़ा ही, राज्याकांक्षी था। उसने वातापि नगर को राजधानी बना कर वातापि साम्राज्य की स्थापना की। सेना का विस्तार करने के लिए उसने जनता पर कर बढ़ाये। इस तरह वह नियंतृत्व शासन करते जनता के असंतोष का कारण बना। ऐसा लगा कि शतृंजय इल्वल के रूप में पैदा हो

SANKAR
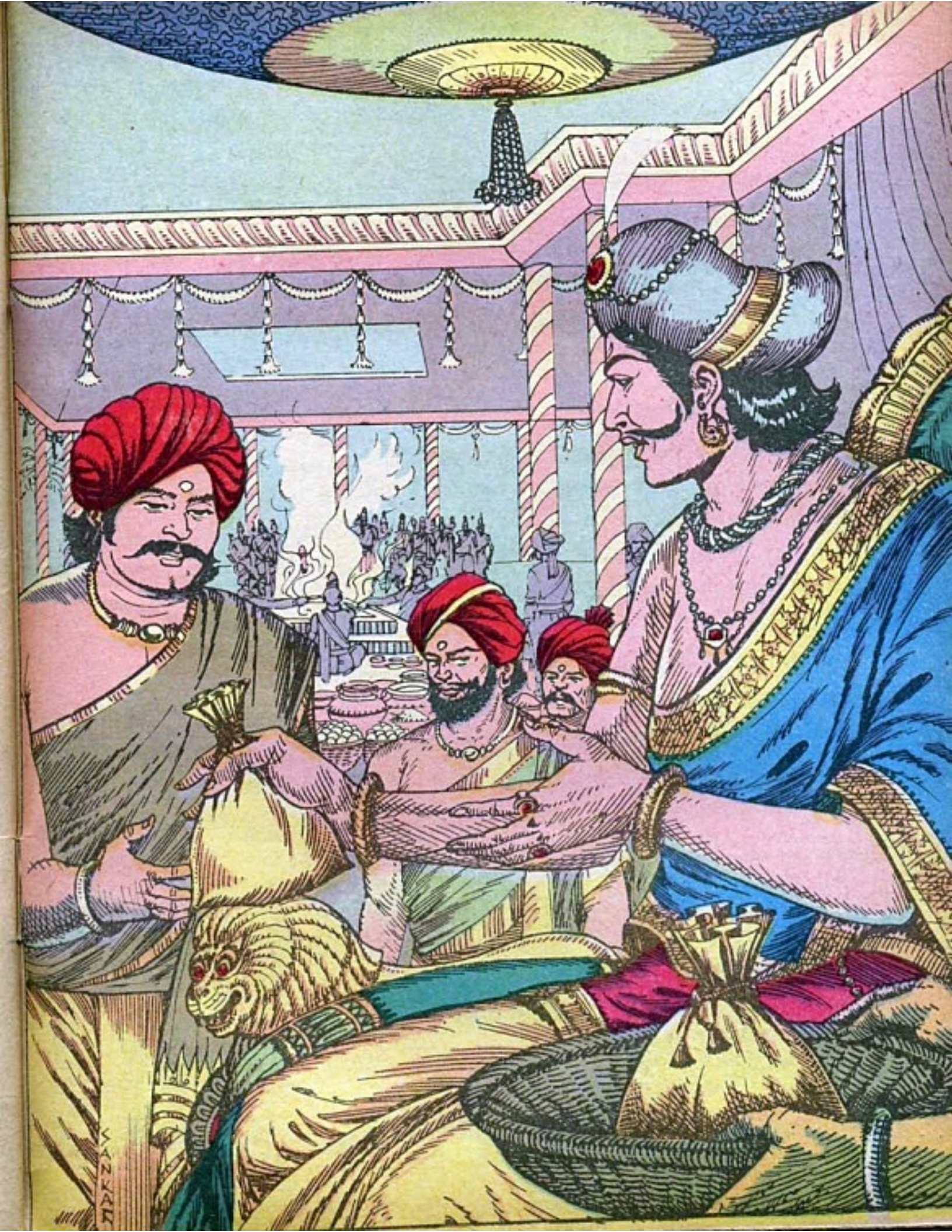
गया है। मतलब, उसी के जैसे जनता पर अत्याचार करने लगा।

शतृंजय के पुत्रों में अंतिम पुत्र चलुक वर्मा उत्तम स्वभाव का था। अगत्स्य के प्रजातंत्र शासन संबंधी सूत्रों को वह मानता था। विघ्नेश्वर की आराधना करते विद्याओं तथा कलाओं के प्रति वह बड़ी अभिरुचि रखता था। जनता का आदर उसने इस तरह प्राप्त किया कि जनता सोचने लगी कि अगत्स्य का अंश इस राजा के अन्दर मौजूद है।

शतृंजय ने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए अपने पुत्रों को प्रेरित किया। पर चलुक ने अपने पिता को समझाया–"जनता को सतानेवाला साम्राज्य का विस्तार कसाई वृत्ति के बराबर है।" यों कहकर उसने अपने भाइयों के साथ मिलकर दूसरे राज्यों पर आक्रमण करने जाने से इनकार किया।

इस पर शतृंजय नाराज होकर बोला–"तुम मेरे बंश में इस तरह पैदा हो गये हो, जैसे सिंह के पेट में चूहे ने जन्म लिया हो। तुम्हें उचित दण्ड मिलना चाहिए।" यों कह कर एक चूहे को मंगवाया, उसका नाम चुलुका रखा और उसके साथ चुलुक वर्मा की शादी घोषित की।

चुलुका का वास्तविक नाम कल्याण किंकिणी है। वह एक अप्सरा है। पर इंद्र के शाप से वह एक चूहे के रूप में धरती पर गिर पड़ी थी।

शतृंजय ने इस ख्याल से उस विवाह केलिए राजा तथा प्रजा को निमंत्रित किया कि विवाह वेदी पर पीढ़ों पर राज कुमार के साथ चूहे को देख लोग परिहास करेंगे; तब चुलुकवर्मा लज्जा के मारे अपना सिर झुका ले, याने अपमानित हो। पर चुलुक वर्मा मंदहास करते बोला–"विघ्नेश्वर एक चूहे को एक महाराजा की वधू बना सकते हैं तो वे ही उसी चूहे को एक सुंदर युवती के रूप में भी बदल सकते हैं, पर इस बात पर शायद आप सब विश्वास न करें, मगर मैं पूर्ण रूप से विश्वास करता हूँ।"

गंधर्व राजकुमारी

[८]

बूढ़े की बातें सुनकर हसन दुख में डूब गया और उसके पैरों पर गिरकर याचना करने लगा कि उसे बीबी व बच्चों का दान करें।

हसन की बातें सुनकर बूढ़ा दया से भर उठा और बोला—"मौत के लिए तैयार बैठे तुम जैसे आदमी को मैंने आज तक नहीं देखा। तुम खुद नहीं जानते कि तुम जो कामना करते हो, वह कैसे खतरों से भरी है? फिर भी मुझ से जो कुछ बन पड़ेगा, मैं अपनी तरफ़ से पूरी मदद देने की कोशिश करूँगा।" यों समझा कर बूढे ने अपनी दाढ़ी में से थोड़े से बाल उखाड़ कर हसन के हाथ थमाते हुए कहा—"सबसे खास काम तो खतरों से बचने का है। जब तुस खतरे में फंस जाओगे, तब इन बालों में से एक निकाल कर उसे जला दो, तब मैं वहाँ पर हाज़रि हो कर तुम्हारी मदद करूँगा।"

इसके बाद बूढ़े ने सर उठाकर ऊपर देखा और जोर से तालियाँ बजाईं। दूसरे ही पल में एक भूत उनके सामने हाजिर हो गया। इस पर बूढ़े ने हसन से कहा—"तुम इसकी पीठ पर बैठ कर चले जाओ। यह तुमको कर्पूर द्वीप पर उतार देगा। इसके बाद यह गायब हो जाएगा! तब तुम्हें अपना रास्ता खुद ढूंढना होगा। कर्पूर द्वीप को पारकर उस पार के छोर पर पहुँच जाओगे, तो तुम वाक्-वाक् द्वीपों वाले समुद्र के इस पार के तट पर अपने को पाओगे। इसके बाद तुम्हारी हिफ़ाजत खुदा ही करे।"

व्यक्ति का कान हसन को एक खेमे जैसे मालूम हुआ। वह भारी बदनवाला आदमी घास पर लेटे सो रहा था। उस पर हसन के गिरते ही हुँकार करके एक ताड़ के पेड़ के बराबर उठ खड़ा हुआ। तब हसन को एक गवरैये के जैसे अपने हाथ में लेकर ऊपर उठाया।

हसन डर के मारे छटपटाते चिल्लाने लगा—"मुझे बचाइये, मुझे बचाइये।"

महाकाय ने मन ही मन सोचा—"यह चिड़िया बड़ी खूबी के साथ चहचहाती है। इसे मैं अपने राजा को भेंट करूँगा। वे बड़े ही खुश हो जायेंगे।"

हसन ने बूढ़े और बाक़ी पंडितों को सलाम किया और भूत की पीठ पर सवार हो गया। भूत ने आसमान के रास्ते चलकर हसन को कर्पूर द्वीप पर उतार दिया, तब अपने रास्ते चला गया। चमकते व खुशबू बिखेरने वाले उस कर्पूर द्वीप के मैदान पर गिरकर हसन पैदल चलने लगा। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर उसे एक डेरे जैसी चीज़ दिखाई दी। खूब उगी हु घास पर चलने वक़्त अचानक उसके पैर से कोई चीज़ टकरा गई और वह नीचे गिर पड़ा।

दर असल हसन एक भारी शरीर वाले के साथ टकरा गया था। उस महाकाय

कर्पूर द्वीप का राजा एक चट्टान पर बैठा था। उसने भी हसन को कोई चिड़िया समझा और उसकी चीख-चिल्लाहटों को पक्षी का कूजन समझ बैठा। उस पर मुग्ध हो एक पिंजड़े में रखवाया और उसके वास्ते द ना-पानी का इंतजाम किया। तब बरामदे में उसे लटकवा दिया। दिन बीतने लगे। हसन पिंजड़े में बंद हो चिंता के मारे घुलकर दिन ब दिन कमजोर होता गया। आखिर उसकी जान की हालत खतरे में पड़ गई। तब जाकर उसे बूढ़े के बालों की बात याद हो आई। राजकुमारी ने उसे खिलाने के लिए जब पिंजड़े से बाहर निकाला, तब उसकी

पकड़ में से बच निकला और मौक़ा पाकर बूढ़े का एक बाल जलाया ।

बूढ़े ने हाज़िर होकर पूछा–"हसन, बताओ, तुम क्या चाहते हो ?"

हसन ने बिनती की–"मेहर्बानी करके मुझे कहीं दूसरी जगह पहुँचा दीजिए । यहाँ पर एक दिन भी रहना पड़ा तो मेरा ज़िदा रहना नामुमक़िन है ।"

"मैंने पहले ही बताया था न? अभी अभी तुम्हारी तक़लीफ़ों की शुरूआत ही हुई । अब तुम मेरा बाल जलाकर मुझ को बुलवा पाये । पर वाक्-वाक् द्वीपों में कोई भी मंत्र-तंत्र काम न देगा । अब तुम्हारा सहारा सिर्फ़ खुदा ही है । तुम्हें कभी इस कोशिश को छोड़ देना चाहिए था ।" बूढ़े ने समझाया ।

"मैं अपनी इस कोशिश में मरने के लिए तैयार बैठा हूँ । मौत जब क़िस्मत में लिखी होती है, तभी आती है । इसके पहले कभी आ नहीं सकती है न? मैं अपनी बीबी की खोज करना कैसे बंद कर सकता हूँ? कृपया मुझे वहाँ तक पहुँचने का रास्ता बता दीजिए ।"

इस पर बूढ़ा हसन का हाथ पकड़कर बोला–"तुम एक बार अपनी आँखें बंद करके फिर खोलो ।" हसन आँखें बंद करके खोलने पर देखता क्या है, वह एक समुद्र के

किनारे है । मगर बूढ़े का कहीं पत्ता नहीं है । उस तट पर कई रंग-बिरंगे रत्न थे ।

उसने एक बार चारों तरफ़ नज़र डालकर देखा, समुद्री तट पर के पहाड़ों पर से विशाल पक्षी "वाक्-वाक्" चिल्लाते झुंड के झुंड उड़े ।

हसन समझ गया कि वह वाक् वाक् द्वीपों में पहुँच गया है । वह अपने दिल में यह सोच ही रहा था कि पक्षियों के द्वारा उसे समुद्र में ढकेलने के पहले ही उसे कहीं छिप जाना है । तभी उसे समीप में एक झोंपड़ी दिखाई दी । वह झोंपड़ी में जाकर बैठ गया । उसी वक़्त जमीन काँप उठी । दूर पर धूल उठी । धूलि का वह बादल

बोला—"देवी, मैं क़िस्मत के मारे इस द्वीप में पहुँच गया हूँ, आप की शरण में हूँ। बीवी-बच्चों की खोज में आये हुए इस बदनसीब पर रहम खाकर मुझे अभय प्रदान कीजिए।"

वह औरत घोड़े से उतर पड़ी, अपने अनुचरों को भेजकर उसकी ओर थोड़ी देर तक परखती रही, तब उसने अपने नक़ाब को हटा दिया। उसके चेहरे को देखते ही भय के मारे हसन चीख उठा। कहा जाता है कि योध कन्याएँ बड़ी सुंदर होती हैं! पर यह सिर्फ़ बूढ़ी ही नहीं, बल्कि बदसूरत और डरावनी भी थी।

पर बूढ़ी ने सोचा कि उसे देखते ही हसन ने डर के मारे नहीं बल्कि श्रद्धा व भक्ति के मारे अपनी आँखें बंद की हैं। बोली—"डरो मत बेटा, मैं तुम्हारी मदद करूँगी। मगर यह बहुत जरूरी है कि आइंदा तुम्हें कोई देख न ले। इसलिए मैं तुम्हें योध कन्याओं की पोशाकें दे देता हूँ। उन्हें पहन लो। इसके बाद ही मैं इतमीनान से तुम्हारी कहानी सुनूंगी।" बूढ़ी चली गई, थोड़ी ही देर में योध कन्याओं के धारण करने वाले कवच' आयुध आदि लेकर लौट आई। उन्हें धारण करने पर हसन भी योध कन्या जैसे लगा। इसके बाद बूढ़ी ने हसन को

उसी की ओर चला आ रहा था। उस बादल के बीच बिजली को कौंध जैसे भालों को नोक, कवच और शिरस्त्राण दिखाई दिये। वे सब भयंकर योध कन्याएँ थीं।

वे कन्याएँ बड़े बड़े घोड़ों पर सवार हो तलवार धारण कर वायु वेग के साथ हसन के समीप पहुंचीं। उनसे बचने का कोई मार्ग न था। इसलिए वह झोंपड़ी के दर्वाजे पर खड़ा हो गया। एक योध कन्या अपने घोड़े को हसन के नजदीक ले आई। उसके मुँह पर नक़ाब पड़ा था, इसलिए हसन उसका चेहरा देख न पाया। उसके मुँह से कोई बात निकलने के पहले ही उसके सामने साष्टांग दण्डवत करके

समुद्र के किनारे एक शिला पर बिठाया, उसने भी दूसरी शिला पर बैठकर हसन की सारी कहानी सुन ली। तब हसन की बीबी व बच्चों के नाम पूछे। हसन उनके नाम सुनाकर बोला–"मैं नहीं जानता कि उन्हें यहाँ पर किन नामों से पुकारते हैं!"

बूढ़ी के मन में हसन के प्रति मातृ भाव जाग उठा। इस पर उसने समझाया–"हसन, जैसे एक माँ अपने बच्चे के वास्ते जो. कुछ करती है, वह सारा मैं तुम्हारे वास्ते करूँगी। तुम्हारी बीबी योध कन्याओं में से एक होगी। कल वे सब जब नहाने आ जाएंगी, तब उन्हें देख तुम अपनी बीबी को पहचान सकोगे। तुम्हारा काम इस तरह सरल होगा!"

दूसरे दिन योध कन्याएँ समुद्र में नहाने के लिए कवच और शिरस्त्राण उतार कर आईं, तब छद्म वेष में हसन ने उन सबको देखा, मगर उनमें उसकी बीबी न थी।

हसन ने बूढ़ी को यह बात बताई, बूढ़ी घबराकर बोली–"बेटा, अब तो हमारे चक्रवर्ती की सात बेटियाँ मात्र बच गई हैं, यदि उनमें से कोई एक तुम्हारी बीबी हो तो हम कुछ नहीं कर सकतीं। तब कहना पड़ेगा कि तुम अपनी बीबी को नहीं, बल्कि अपनी मौत को ढूंढ़ रहे हो! अब तुम अपनी कोशिश को छोड़ दो!"

"माँ, मैं इतनी दूर आकर क्या वापस लौटूं? मैं आपकी मदद पर निर्भर हूं। मैं अगर इस वक़्त पर हार मान बैठूं तो इसका मतलब होगा कि मैं आप की शक्ति और सामर्थ्य पर शंका कर रहा हूं। ये सातों द्वीप आपके हाथों में सुरक्षित हैं, ऐसी हालत में आपके लिए कौन कार्य नामुमक़िन हो सकता है!"

"मेरा अधिकार तो सिर्फ़ इन द्वीपों की रक्षा करनेवाली योध कन्याओं पर ही। उनमें से तुम किसी को भी चुन लो, मैं दे दूंगी, तुम उसे अपने नगर में ले जाकर सुखपूर्वक अपने दिन बिता दो। इस बात को न मानोगे तो हम दोनों की मौत निश्चित है।" बूढ़ी ने समझाया। (और है।)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अगस्त १९८२ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

★

Devidas Kasbekar

A. L. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जून १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अप्रैल के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : दीदी कर रही इशारा!

द्वितीय फोटो : मुन्ना क्या जाने बेचारा!!

प्रेषक : प्रभुलाल सोनी, कला मंदिर, सराफ़ा बाजार, जोधपुर (राज.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
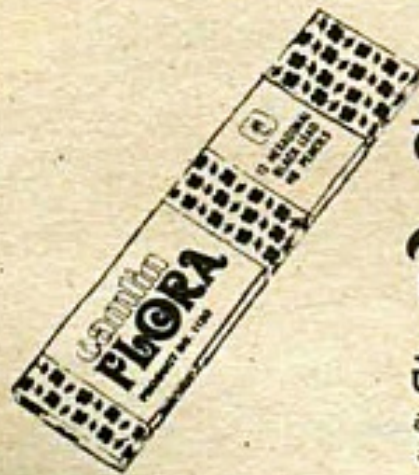
Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 23 (Hindi)
1st Prize: Girish Vasant Chiddarwar, Digras. *2nd Prize:* Anand M. Parulekar, Bombay-57. *3rd Prize:* Jayeshwar I. Vasu, Bombay-400 067. *Consolation Prizes:* Bhagwandad, Rajasthan-326 502. Kumar Anand, Katihar. Darshan Natvarlal Jani, Ahmedabad-380 001. Shabia Shahid, Allahabad. Papu Kumar, Patna-800 002.

CHANDAMAMA (Hindi)
JUNE 1982
Regd. No. M. 5452
क्रॅकजॅक–
दीवानापन भी क्या स्वादभरा.
कोई कहे मीठे हैं, कोई कहे नमकीन. क्रॅकजॅक के स्वाद में,
खो जायें सब लेकिन.
PARLE
KrackJack
BISCUITS
सिर्फ़ यही पैक खरीदिये.
क्योंकि
असली क्रॅकजॅक
खुले कभी नहीं बिकते.
कभी नहीं.
everest/82/PP/140-hn